

9

Ambition Law Institute

विनिर्दिष्ट अनुतोष
अधिनियम

AMBITION LAW INSTITUTE

SPECIFIC RELIEF ACT

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम

विषय सूची

क्रम सं.	अध्याय का नाम	पेज सं.
1.	भूमिका	1-2
2.	विनिर्दिष्ट अनुतोष क्या है	3-4
3.	विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम - 1963	5-5
4.	सम्पत्ति के कब्जे की पुनः प्राप्ति	6-12
5.	संविदाओं का विनिर्दिष्ट अनुपालन	13-31
6.	विलेखों का परिशोधन	32-33
7.	संविदाओं का विखंडन	34-36
8.	विलेखों का विलोपन या रद्दीकरण	37-39
9.	घोषणात्मक आज्ञप्तियाँ	40-42
10.	निवारक अनुतोष	43-55
11.	विगत वर्षों में पूछे गये प्रश्न	56-56

भूमिका

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम - 1963 एक वस्तुनिष्ठ या मौलिक विधि (Substantive Law) है। यह केवल सिविल अधिकारों की क्षतिग्रस्तता को ही उपचारित करती है। इसकी उत्पत्ति साम्य की देन है। यही कारण है कि साम्य-विधि को समझने में इसके उपबन्ध दृष्टान्त के रूप में हमारे लिए उपयोगी होते हैं।

प्रायः अधिकांश राज्यों की न्यायिक सेवा की मुख्य परीक्षा में इससे प्रश्न पूछे जाते हैं। इसके अलावा इसके उपबन्धों का प्रयोग संविदा-विधि, न्यास-विधि, सम्पत्ति अन्तरण विधि एवं साम्य-विधि के प्रश्नों का समाधान करने में भी किया जाता है। ऐसे में इसकी उपेक्षा करना सफलता में बाधक बन सकता है।

मुख्य परीक्षा के सन्दर्भ में सर्वप्रथम विगत परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों के अवलोकन से यह निर्धारित करना चाहिए कि -

- (क) इस अधिनियम के किस-किस भाग से प्रायः प्रश्न पूछे जाते रहें हैं?
- (ख) किस भाग विशेष से प्रश्न नहीं पूछे गये हैं?
- (ग) पूछे गये प्रश्नों की प्रकृति कैसी है?
- (घ) प्रश्न केवल अधिनियम के उपबन्धों पर ही आधारित होते हैं या अधिनियम से परे से भी पूछे जाते हैं?
- (जैसे यह प्रश्न कि - 'विनिर्दिष्ट अनुतोष साम्य विधि की देन है' कथन की व्याख्या करें। ऐसे बिन्दु पर है जो अधिनियम के उपबन्धों में नहीं हैं।)
- (ङ.) क्या पूछे गये प्रश्न का उत्तर अधिनियम के निर्दिष्ट भाग से ही दिया जा सकता है या संपूर्ण/ लगभग संपूर्ण अधिनियम के समेकित व सामान्य अध्ययन से?
- (जैसे - प्रश्न - विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम - 1963 के अधीन कौन-कौन व्यक्ति उपचार पाने के लिए अर्ह है? (प्रश्न 2 (ब), U.P.P.C.S (J) 2000)

उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के लिए दो बातें जाननी आवश्यक है -

- यह कि उक्त अधिनियम में कौन-कौन से उपचार हैं? एवं
 - यह कि प्रत्येक सुभिन्न उपचार पाने का हक किन-किन व्यक्तियों को है?
- अतः यह स्पष्ट है कि इस प्रश्न का उत्तर तभी दिया जा सकता है, जबकि संपूर्ण अधिनियम का गहरा व धर्माकरण पर आधारित अध्ययन किया गया हो।)

इस अधिनियम के वे भाग जिनसे प्रायः प्रश्न पूछे जाते हैं -

इस अधिनियम में कुल सात प्रकार के विनिर्दिष्ट उपचारों का प्रावधान किया गया है। ये हैं-

1. सम्पत्ति के कब्जे का प्रत्युद्धरण,
2. संविदाओं का विनिर्दिष्ट अनुपालन,
3. लिखतों (कंपनी के संगम अनुच्छेद के सिवाय) की परिशुद्धि,
4. संविदाओं का विखण्डन,

5. लिखतों का रद्दकरण,
6. घोषणात्मक डिक्रियाँ, एवं
7. शाश्वत व्यादेश।

इन समस्त उपचारों में -

1. संविदाओं का विनिर्दिष्ट अनुपालन
2. घोषणात्मक आज्ञापितियाँ, एवं
3. व्यादेश से प्रायः प्रश्न पूछे जाते हैं।

अतः ये तीनों की परीक्षा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण अध्ययन विषय है। इसके अलावा कुछेक बार 'संपत्ति के कब्जे की वापसी' उपचार से भी प्रश्न पूछे गये हैं। (U.P.P.C.S. (J)-99)।

वे भाग जो मुख्य परीक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं -

विगत प्रश्न-पत्रों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि इस अधिनियम के प्रारम्भिक भाग (धारा 1 से 4) से प्रश्न नहीं पूछे जाते हैं। इसके अलावा सात विनिर्दिष्ट उपचारों में से भी-

1. संविदाओं का विखण्डन,
2. लिखतों का परिशोधन, एवं
3. लिखतों के रद्दकरण से प्रश्न नहीं पूछे जाते हैं।

परन्तु आगामी परीक्षाओं में इनमें से किसी पर भी प्रश्न पूछे जा सकते हैं, अतः ऐसे में (क) प्रारम्भिक भाग में उल्लिखित तथ्यों को केवल सामान्य जानकारी के आशय से देखें।

(ख) शेष तीनों उपचारों का केवल बेयर एक्ट से एक बार अध्ययन कर लें एवं निम्नलिखित का प्रत्येक उपचार के संबंध में संक्षिप्त नोट्स बनायें -

1. उपचारों से संबंधित धारयाँ?
2. उपचार कब प्राप्त होगा?
3. कब नहीं प्राप्त होगा?
4. कौन पा सकेगा?

ऐसे संक्षिप्त नोट्स को परीक्षा के कुछ समय पूर्व देख लें। ऐसा करने से यदि कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाता है, जिसके उत्तर के लिए संपूर्ण अधिनियम का सामान्य ज्ञान आवश्यक है, तो उसका उत्तर दिया जा सकेगा।

अध्याय - 1 विनिर्दिष्ट अनुतोष क्या है

अधिकार व कर्तव्य परस्पर सहवर्ती होते हैं। अतः यदि एक व्यक्ति द्वारा अपने किसी कर्तव्य का भंग किया जाता है तो इससे किसी अन्य का कोई अधिकार क्षतिग्रस्त हो जाता है। ऐसे में अधिकार की क्षति को दूर करने के लिए विधि द्वारा उपचार प्रदान किया जाता है। यह दो प्रकार का होता है -

1. सामान्य उपचार, व
2. विनिर्दिष्ट या विशिष्ट उपचार।

1. सामान्य उपचार - यह क्षतिग्रस्त अधिकार की प्रकृति के आधार पर दो प्रकार का होता है। यदि क्षतिग्रस्त अधिकार सिविल कार्यवाही का विषय है तो क्षतिपूर्ति सामान्य उपचार होगी।

जैसे - 'क' की घड़ी 'ख' की उपेक्षा से नदी में गिर जाती है। यहाँ 'क' का घड़ी धारण करने का अधिकार 'ख' की उपेक्षा से क्षतिग्रस्त हुआ है। यह सिविल प्रकृति का अधिकार है, अतः इसका उपचार 'क' को 'ख' से क्षतिपूर्ति दिलाकर किया जायेगा।

यदि क्षतिग्रस्त अधिकार दण्डक प्रकृति का है तो अधिकार को क्षतिग्रस्त करने वाले को दण्डित किया जाना सामान्य उपचार होगा।

जैसे - 'क' ने 'ख' को लूटा। यहाँ 'ख' का यह अधिकार कि कोई भी उसे न लूटेगा = 'क' ने क्षतिग्रस्त किया है। इसके लिए उपचार दण्डक विधि में है। अतः 'क' को दण्डित किया जायेगा।

इस प्रकार सामान्य उपचार अधिकार की प्रकृति के अनुसार या तो क्षतिपूर्ति या दण्ड होता है।

2. विनिर्दिष्ट या विशिष्ट उपचार - विनिर्दिष्ट उपचार से तात्पर्य यह है कि कर्तव्य को भंग करने वाले को वही कर्तव्य करने को विवश किया जाय ताकि जो अधिकार क्षतिग्रस्त हो रहा है वह क्षतिग्रस्त न हो। इस प्रकार जहाँ सामान्य उपचार में अधिकार की क्षतिग्रस्तता का निवारण कर्तव्य भंग करने वाले से क्षतिपूर्ति कराकर या उसे दण्डित करके किया जाता है, अर्थात् जिसका अधिकार क्षतिग्रस्त होता है उसे अन्य माध्यमों से संतुष्ट कराया जाता है, वहीं विशिष्ट उपचार में अधिकार की क्षतिग्रस्तता का निवारण अन्य माध्यमों की बजाय ठीक वही कर्तव्य कराकर किया जाता है, जिसके न किये जाने से अधिकार क्षतिग्रस्त हुआ है या हो रहा है।

जैसे - यदि 'क' ने 'ख' को 1,000 रु दिया, जिसके बदले में 'ख' दूसरे दिन अपनी घड़ी 'क' को देने की संविधि करता है। अगले दिन 'ख' घड़ी न देकर 'क' को 'ख' से घड़ी पाने के अधिकार को क्षतिग्रस्त करता है।

यहाँ सामान्य उपचार यह होगा कि 'ख' से 'क' को क्षतिपूर्ति अर्थात् 1,000 वापस करा दिये जाये। यह अधिकार की क्षतिग्रस्तता का निवारण नहीं है, अपितु अन्य माध्यम से 'क' को संतुष्ट कराना है।

जबकि 'ख' को घड़ी देने को विवश करके घड़ी दिलाना ऐसा उपचार है, जिससे क्षतिग्रस्त अधिकार पूर्णतः व अपनी प्रकृति के अनुसार संतुष्ट हो जाता है। अतः यह विनिर्दिष्ट उपचार है।

यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि विशिष्ट उपचार तभी प्रदान किया जा सकता है, जबकि -

(क) ऐसा कराया जाना संभव हो, एवं

(ख) वादी सामान्य उपचार की माँग न करे।

उपरोक्त दृष्टांत में यदि 'ख' को वह घड़ी, जो 'क' को दी जानी थी नष्ट हो जाती तो 'ख' को विवश करके भी उसे 'क' को नहीं दिलाया जा सकता। ऐसे में विनिर्दिष्ट उपचार का प्रवर्तन संभव न होता।

विनिर्दिष्ट उपचार की उत्पत्ति

विनिर्दिष्ट या विशिष्ट उपचार साम्य विधि की देन है। साम्य विधि के प्रचलन से पूर्व किसी भी व्यक्ति को विधि द्वारा केवल क्षतिपूर्ति या दण्ड के माध्यम से ही उपचारित किया जाता था। साम्य न्यायालयों ने, उस दशा में, जबकि किसी अधिकार का विशिष्ट अनुपालन कराया जाना संभव हो, न कराना, अधिकार धारणकर्ता के प्रति अन्याय माना और इसे दूर करने का प्रयास किया।

इस प्रकार विनिर्दिष्ट अनुतोष बेन्थम के इस कथन से स्पष्ट किया जा सकता है कि -

“विधि का एक मात्र उद्देश्य यह है कि जो वस्तु मेरी है, मुझे दे दी जाय। मुझे उसके बदले में अन्य कोई वस्तु या धन लेने को बाध्य न किया जाय।”

यही कारण है कि विशिष्ट अनुतोष को जिसे सामान्य विधि मान्यता नहीं प्रदान करती थी, साम्य ने मान्यता प्रदान किया। इस अनुतोष की अपेक्षा विशिष्ट महत्व है। यह उपचार साम्य न्यायालय द्वारा भी तभी प्रवर्तित कराया जाता था, जबकि निम्नलिखित दो शर्तें अवश्य पूर्ण होती हों-

1. यह कि प्रश्नगत अधिकार का विनिर्दिष्ट प्रवर्तन कराना संभव हो, एवं
2. यह कि वादी ने कोई वैकल्पिक (सामान्य उपचार) स्वीकार न कर लिया हो।

साम्य द्वारा मान्यता दिये गये विनिर्दिष्ट उपचारों को भारत में अधिनियमित विधि द्वारा स्थापित कर दिया गया।

यह अधिनियम है -

‘विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम - 1963.

अध्याय - 2 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम - 1963

(1963 का अधिनियम क्रमांक - 47)

अधिनियम के बारे में -

- यह अधिनियम कतिपय प्रकार के विनिर्दिष्ट उपचारों के बारे में ही विधि को परिभाषित व संशोधित करता है। अर्थात् यह विनिर्दिष्ट उपचारों के संदर्भ में संपूर्ण संहिता नहीं है (अधिनियम की उद्देशिका)।

- यह अधिनियम - 3 भागों, 8 अध्यायों एवं 42 धाराओं से संपेक्षित है।

- इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है।

- 13 दिसम्बर, 1963 को पारित किया गया एवं 1 मार्च, 1964 को भारत के राजपत्र में प्रकाशित किये जाने से लागू हुआ है।

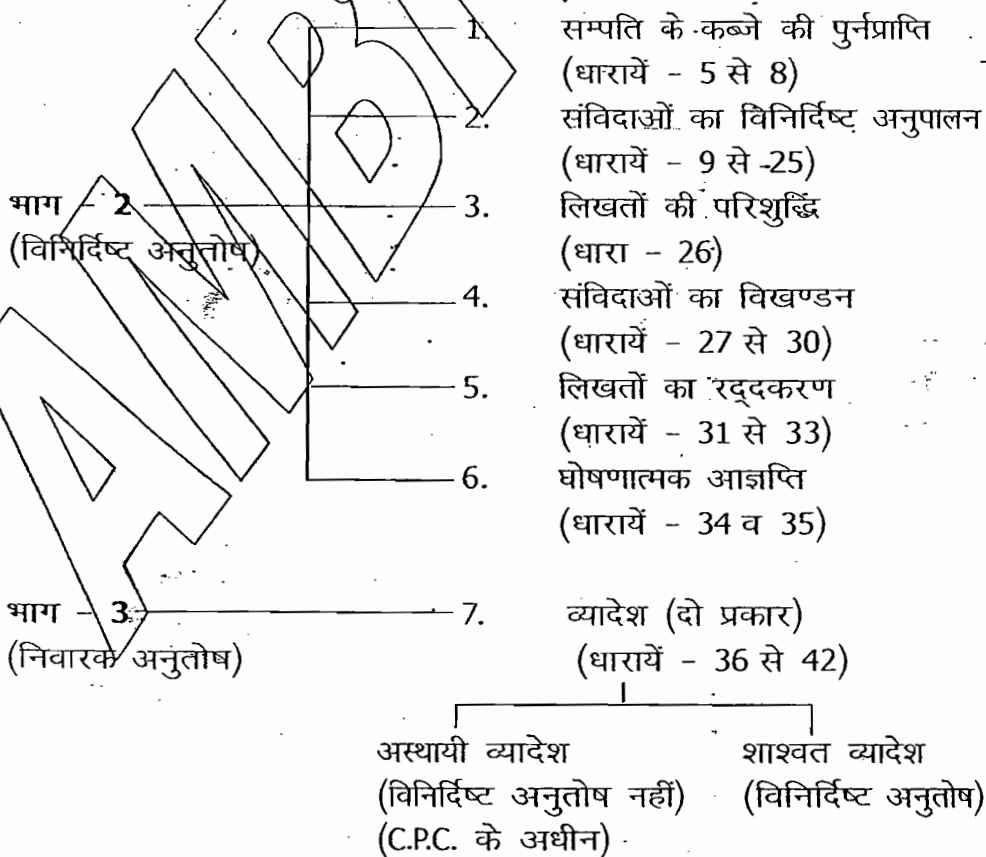
- इस अधिनियम में जहाँ कहीं किसी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की व्यवस्था की गयी है, वहाँ इस अधिनियम से भिन्न कोई उपचार भी प्राप्त किया जा सकता है (धारा - 3)।

- यह अधिनियम भारतीय रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1908 के प्रावधानों के सामान्यतः अधीन है (धारा - 3)।

- इस अधिनियम में उपबन्धित विनिर्दिष्ट उपचार केवल सिविल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ही प्रयोज्य हैं न कि दण्डिक प्रकृति के अधिकारों के प्रवर्तन के लिए (धारा - 4)।

- इस अधिनियम का भाग - 1 (धारा में 1 से 4) परम्परागत प्रकृति के विषयों अर्थात् - नाम, विस्तार, प्रवर्तन तिथि, परिभाषा व आवृत्ति खण्ड आदि से संबंधित हैं।

- अधिनियम का भाग - 2 व भाग - 3 विनिर्दिष्ट अनुतोषों के बारे में है। इन दोनों भागों में निम्नलिखित क्रम में अनुतोषों का प्रावधान किया गया है -



अध्याय - 3 सम्पत्ति के कब्जे की पुनः प्राप्ति

आधिपत्य का विधि में 9वाँ भाग है

उपर्युक्त उक्ति से विधि में आधिपत्य का महत्त्व स्पष्ट होता है। सम्पत्ति सम्बन्धी विवादों में न्यायालय उसके आधिपत्य को प्रथम स्थान देता है एवं उसके बाद वह अन्य तथ्यों को ग्रहण करता है।

‘आधिपत्य स्वामित्व का प्रथमदृष्ट्या साक्ष्य है।’

जहाँ किसी सम्पत्ति पर किसी व्यक्ति का आधिपत्य सिद्ध हो जाता है तो न्यायालय प्रथमदृष्ट्या उस व्यक्ति को सम्बन्धित सम्पत्ति का स्वामी मान लेता है, जब तक कि स्वत्व या अन्य आधारों पर प्रतिकूल बात सिद्ध नहीं कर दी जाये।

‘प्रत्येक आधिपत्य किसी अपकारकर्ता के विरुद्ध एक वैध आधिपत्य है।’

इस तरह आधिपत्य किसी व्यक्ति का अपकारकर्ता के विरुद्ध एक अच्छा उपचार प्रदान करता है।

‘आधिपत्य का संरक्षण व्यक्ति के संरक्षण का एक अंग है।’

सेविनी महोदय के अनुसार - आधिपत्य की रक्षा व्यक्ति की रक्षा का एक भाग होता है, क्योंकि आधिपत्य स्वामित्व की वास्तविक या भौतिक अनुभूति है।

अर्थात् आधिपत्य वह अनुभूति है जो विधि में स्वामित्व की धारणा को जन्म देती है। और स्वामित्व को संरक्षण प्रदान करती है। इसलिए कहा गया है कि -

‘आधिपत्य स्वामित्व की वस्तुतः प्रतिवस्तु है।’

उपर्युक्त उक्तियों से आधिपत्य का महत्त्व एवं विधि में उसका स्थान स्वतः सिद्ध हैं। इतना ही नहीं, अनेक अधिनियमों में भी आधिपत्य को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 110 में यह प्रावधान किया गया है कि जो कोई व्यक्ति किसी सम्पत्ति के सम्बन्ध में उस व्यक्ति के स्वामित्व से इंकार करता है जिसके कि आधिपत्य में वह सम्पत्ति है और स्वयं अपने आपको उसका स्वामी बताता है तो यह सिद्ध करने का भार उस व्यक्ति पर होगा जो कि ऐसे आधिपत्य या स्वामित्व से इंकार करता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 में भी आधिपत्य को संरक्षित किया गया है। दंडाधिकारी को यह अधिकार है कि भूमि, जल आदि से सम्बन्धित विवादों में वह आधिपत्य की जाँच करते हुए उस व्यक्ति के पक्ष में निर्णय देगा जिसके कि आधिपत्य में वह सम्पत्ति पायी जाती है।

इसी तरह विशिष्ट अनुलोप अधिनियम की धारा 6 में आधिपत्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जो कि हमारे अध्ययन का विषय है। विशिष्ट अधिनियम में चल एवं अचल दोनों प्रकार की सम्पत्तियों के आधिपत्य के बारे में अलग-अलग प्रावधान किया गया है। धारा 5 एवं 6 अचल सम्पत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति एवं धारा 7 एवं 8 चल सम्पत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के बारे में उल्लेख करती हैं।

धारा 5 स्वत्व के आधार पर आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के लिए वाद संस्थित करने का अधिकार देती है। जैसे कि ‘लक्ष्मन बनाम शम्भू नारायण’ के वाद में धारण किया गया था, स्वत्व के

मर्यादित कम्पनी की सम्पत्ति का आधिपत्य उसके संचालकों की सहमति से प्राप्त किया जाता है तो यह तर्क नहीं किया जा सकता कि चूँकि संपत्ति का आधिपत्य कम्पनी की साधारण सभा की सहमति से नहीं लिया गया है, अतः वह बिना सहमति के आधिपत्य को प्राप्त करना माना जाये।

(5) विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अन्यथा निष्कासन - यदि किसी व्यक्ति को विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अन्यथा निष्कासित किया गया है तो वह उसकी पुनः प्राप्ति के लिए वाद संस्थित कर सकेगा। उदाहरणार्थ, यदि कोई भू-स्वामी ऐसे किरायेदार को बलात् निष्कासित करता है जो किरायेदारी के समाप्त हो जाने पर भी उस पर आधिपत्य धारण किये हुए है तो यह विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अन्यथा निष्कासन माना जायेगा। यहाँ तक कि सिस्कार भी विधि द्वारा विहित प्रक्रिया से अन्यथा किसी को कब्जे से निष्कासित नहीं कर सकती। इस सम्बन्ध में गणेशमल बनाम वेलाराम का मामला अवलोकन योग्य है। इसमें उपखंड अधिकारी द्वारा एक मामले में किसी व्यक्ति को सम्पत्ति से निष्कासित करने का आदेश दिया गया था लेकिन उस मामले में वह व्यक्ति पक्षकार नहीं था। इसे विधि द्वारा विहित प्रक्रिया से निष्कासित किया जाना नहीं माना गया।

इस वाद में इस धारा के आशय को भी स्पष्ट किया गया था - कोई व्यक्ति किसी सम्पत्ति पर कितना ही अच्छा स्वत्व क्यों नहीं रखता हो, विधि को अपने हाथों में नहीं ले सकता।

(6) निष्कासन से 6 माह के अंदर वाद संस्थित किया जाना - धारा 6 की अंतिम एवं आवश्यक शर्त यह है कि ऐसा वाद निष्कासन के दिनांक से 6 माह के अंदर प्रस्तुत कर दिया जाना चाहिए। यदि निष्कासित व्यक्ति 6 माह में वाद प्रस्तुत नहीं करता है तो उसे फिर अपना स्वत्व सिद्ध करना होगा। यह धारा स्वत्व के आधार पर वाद लाने से नहीं रोकती।

धारा 6 का उद्देश्य

धारा 6 शांति एवं व्यवस्था को श्रेय देती है। यह कानून एवं व्यवस्था का बनाये रखने तथा विवादग्रस्त विषयों को विधि की उचित प्रक्रिया द्वारा हल करने का प्रावधान करती है। इस धारा के मुख्यतः दो उद्देश्य हैं -

- (i) ऐसे व्यक्तियों को, चाहे उनका स्वत्व कितना ही अच्छा क्यों न हो, विधि को अपने हाथों में लेने से रोकना है। इस तरह यह धारा किसी व्यक्ति को विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अन्यथा निष्कासित करने से रोकती है।
- (ii) निष्कासित व्यक्ति को शीघ्र एवं सरल प्रक्रिया द्वारा उपचार प्रदान करना है। यह उपचार सिविल न्यायालय के माध्यम से प्रदान किया जाता है।

इस बिन्दु पर एस० आर० एज्जज बनाम तमिलनाडु हेण्डलूम वीवर्स को-ऑपरेटिव सोसायटी का एक अच्छा मामला है। इसमें उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 6 का मुख्य उद्देश्य किसी व्यक्ति का कानून को हाथों में लेने से रोकना है। यह ऐसे व्यक्तियों को निरुत्साहित करती है जो गलत तरीकों से किसी व्यक्ति को बेकब्जा करने का प्रयास करते हैं।

धारा 6 का क्षेत्र

धारा 6 का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। इस धारा के अन्तर्गत -

आधार पर वाद संस्थित करने की प्रक्रिया संहिता के आदेश 21, नियम 35 एवं 36 में उल्लिखित है।

अवधि - धारा 5 के अन्तर्गत स्वत्व के आधार पर वाद आधिपत्य से च्युत होने के दिनांक से 12 वर्षों के अंदर संस्थित किया जा सकता है।

आज्ञाप्ति का निष्पादन - स्वत्व के आधार पर आधिपत्य प्राप्त करने की आज्ञाप्ति पारित हो जाने पर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 35 एवं 36 के अंतर्गत आज्ञाप्ति के निष्पादन द्वारा आधिपत्य प्राप्त किया जा सकता है। धारा 6 अचल सम्पत्ति के निष्कासन से पीड़ित व्यक्ति को न्यायालय में वाद संस्थित कर उसके आधिपत्य की पुनः प्राप्ति का अधिकार देती है। जहाँ वादी द्वारा अभिकथित विशिष्ट स्वत्व को स्थापित नहीं किया जा सका हो, वहाँ केबज़ाख़ी स्वत्व के आधार पर वाद डिक्री किया जा सकता है।

अचल सम्पत्ति के कब्जे की वापसी

धारा 6 के अनुसार - कोई भी व्यक्ति, बिना उसकी सहमति के विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अन्यथा, उसके आधिपत्य में की अचल सम्पत्ति से किसी व्यक्ति द्वारा निष्कासित किया जाता है, तो वह व्यक्ति न्यायालय में वाद संस्थित कर उस व्यक्ति से पुनः आधिपत्य प्राप्त कर सकेगा, जिसके कि आधिपत्य में वह है।

उपचार - अधिनियम की धारा 6 के अधीन संस्थित वाद में दिये गये निर्णय से यदि कोई पक्षकार पीड़ित अथवा असंतुष्ट है तो वह अन्य उपचार उपलब्ध नहीं होने पर ऐसे निर्णय को पुनरीक्षण याचिका के माध्यम से चुनौती दे सकता है। लेकिन यह आवश्यक है कि ऐसे निर्णय से गंभीर अन्याय हुआ हो अथवा उसमें विधि की त्रुटि अन्तर्भूत हो। साथ ही धारा 6 के अधीन संस्थित वाद में पारित निर्णय से असंतुष्ट पक्षकार द्वारा अपना स्वत्व स्थापित करने तथा व्यादेश के लिए वाद संस्थित किया जा सकता है।

धारा 6 की अपेक्षाएँ

अधिनियम की धारा 6 में प्रयुक्त भाषा के आधार पर इस धारा का लाभ प्राप्त करने के लिए कुछ अपेक्षाएँ पूरी होना आवश्यक है -

- (1) **आधिपत्य का होना** - धारा 6 के अन्तर्गत वाद संस्थित के लिए यह आवश्यक है कि निष्कासित व्यक्ति का ऐसे समय पर उस सम्पत्ति पर आधिपत्य रहा हो। यदि निष्कासन के समय उसका आधिपत्य ही नहीं था तो वह धारा 6 के अन्तर्गत आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के लिए वाद संस्थित नहीं कर सकता।
- (2) **आधिपत्य का वैध होना** - ऐसा आधिपत्य वैध होना चाहिए, अर्थात् वह विधि द्वारा मान्य होना चाहिए। यदि वह कपट, अनुचित प्रभाव, अनधिकृत प्रवेश आदि के द्वारा प्राप्त किया गया है धारा 6 के अर्थों में वह वैध आधिपत्य नहीं माना जायेगा। इस धारा के प्रावधान अति चारी की सहायता नहीं करते, चाहे उसका कब्ज़ा कितना ही पुराना क्यों न हो।
- (3) **अचल सम्पत्ति** - यह धारा सिर्फ अचल सम्पत्ति के आधिपत्यों पर ही प्रयोज्य है, चल सम्पत्ति पर नहीं।
- (4) **बिना सहमति के निष्कासन** - ऐसा निष्कासन उस व्यक्ति की सहमति के बिना होना चाहिए। यदि निष्कासन व्यक्ति की सहमति से किया जाता है तो यह धारा प्रयोज्य नहीं होगी। यदि किसी

- (i) अचल सम्पत्ति के आधिपत्य से निष्कासित व्यक्ति अपने पूर्व आधिपत्य के आधार पर पुनः आधिपत्य प्राप्त करने हेतु न्यायालय में वाद संस्थित कर सकता है। भले ही निष्कासित करने वाले व्यक्ति का स्वत्व कितना ही अच्छा क्यों नहीं हो।
- (ii) धारा 6 के अन्तर्गत आधिपत्य प्राप्ति हेतु वादी के लिए अपने स्वत्व का सिद्ध करना आवश्यक नहीं होता।
- (iii) यह धारा किसी व्यक्ति को सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत स्वत्व के आधार पर वाद संस्थित करने से नहीं रोकती।
- (iv) धारा 6 के अन्तर्गत सरकार के विरुद्ध वाद दायर नहीं किया जा सकता। बशर्ते कि उसके द्वारा विधि की प्रक्रिया से निष्कासन किया गया हो।
- (v) धारा 6 के अन्तर्गत संस्थित किये गये वादों के निर्णय एवं आज्ञापतियाँ के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती और न ही पुनरावलोकन ही किया जा सकता है।

धारा 5 एवं 6 में अंतर

धारा 5 एवं धारा 6 दोनों ही अचल सम्पत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के बारे में प्रावधान करती हैं और दोनों ही एक-दूसरे की पूरक लगती हैं। पर वास्तव में ऐसा नहीं है। इन दोनों में कुछ महत्वपूर्ण अंतर पाये जाते हैं -

धारा 5

- (1) धारा 5 के अन्तर्गत आधिपत्य की पुनः प्राप्ति हेतु एक सम्बन्धित समय तक निरंतर चलने वाले वाद संस्थित करना होता है।
- (2) धारा 5 के अन्तर्गत संस्थित किया गया वाद स्वत्व पर आधारित होता है।
- (3) इसमें वाद संस्थित करने की अवधि-सीमा 12 वर्ष तक की होती है।

धारा 6

- (1) धारा 6 में सरल एवं संक्षिप्त प्रक्रिया को अपनाया गया है।
- (2) धारा 6 के अन्तर्गत पूर्व आधिपत्य के आधार पर वाद संस्थित किया जाता है। इसमें स्वत्व को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती।
- (3) इसमें आधिपत्य के निष्कासन के दिनांक से 6 माह के अंदर वाद संस्थित करना होता है।

धारा 6 के अन्तर्गत कौन वाद संस्थित कर सकता है।

धारा 6 के अन्तर्गत आधिपत्य की पुनः प्राप्ति हेतु वह व्यक्ति वाद संस्थित कर सकता है जो कि उस संपत्ति पर वैध एवं न्यायतः आधिपत्य रखता हो। यदि कोई अनधिकृत प्रवेशकर्ता आधिपत्य से निष्कासित कर दिया जाता है तो यह धारा प्रयोज्य नहीं होगी। एक मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि धारा 6 के अन्तर्गत संपत्ति के कब्जे से बेदखल किया गया व्यक्ति कब्जे के पुनः प्राप्ति के लिए वाद ला सकता है। कब्जाधारी व्यक्ति का सभी के विरुद्ध सर्वाधिक अच्छा स्वत्व माना गया है। इसका एकमात्र अपवाद है वास्तविक स्वामी। वास्तविक स्वामी के विरुद्ध ऐसे कब्जाधारी का स्वत्व बेहतर नहीं होता। ऐसे मामलों में स्वत्व को साबित किया जाना आवश्यक नहीं है। मात्र यह बताया जाना पर्याप्त है कि वाद संस्थित

करने के छः माह के भीतर विधिविरुद्धता बेकब्जा कर दिया गया है।

चल सम्पत्ति के कब्जे की वापसी

धारा 7 विशिष्ट चल संपत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति

किसी विशिष्ट चल संपत्ति का अधिकृत व्यक्ति सिविल प्रक्रिया संहिता में विहित रीति के अनुसार उसे पुनः प्राप्त कर सकेगा।

व्याख्या 1 - कोई न्यासधारी किसी ऐसे न्यास की चल संपत्ति के आधिपत्य को पुनः प्राप्त कर सकेगा जिसका कि किसी हितग्राही के हित के लिए न्यासधारी है।

व्याख्या 2 - किसी चल संपत्ति पर वर्तमान आधिपत्य प्राप्त करने हेतु कोई विशिष्ट या साधारण अधिकार वाद संस्थित करने हेतु पर्याप्त आधार है।

यह धारा किसी विशिष्ट चल संपत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के बारे में उपबंध करती है। धारा 7 के प्रयोज्य होने के लिए कुछ अपेक्षाएँ निर्मित की गई हैं जो निम्नलिखित हैं -

- (i) विशिष्ट चल संपत्ति का होना - यह धारा सिर्फ विशिष्ट चल संपत्ति पर ही प्रयोज्य है किसी सामान्य संपत्ति या क्षतिपूर्ति के लिए लागू नहीं होती। अतः इसके लिए संपत्ति का निश्चित एवं पहचान योग्य होना आवश्यक है।
- (ii) अधिकृत व्यक्ति - इस धारा के अन्तर्गत आधिपत्य प्राप्त करने हेतु वही व्यक्ति अधिकृत है जो उस संपत्ति पर तत्काल आधिपत्य का अधिकार रखता हो।
- (iii) विधि द्वारा आधिपत्य की प्राप्ति - धारा 7 के अंतर्गत विशिष्ट चल संपत्ति का आधिपत्य प्राप्त करने हेतु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 20 नियम 10 के अंतर्गत एक नियमित वाद संस्थित किया जाना आवश्यक है।
- (iv) क्षतिपूर्ति - न्यायालय में वाद संस्थित करने के पश्चात् भी यदि प्रतिवादी विशिष्ट चल संपत्ति का आधिपत्य नहीं दे पाये तो न्यायालय को यह अधिकार है कि वह उसका उच्चतम मूल्य निर्धारित कर वादी को भुगतान करने का आदेश दे।

यदि वाद प्रतिकूल कब्जे के आधार पर संस्थित किया जाता है तो यह साबित किया जाना आवश्यक है कि ऐसा कब्जा कब एवं किस तरह प्राप्त हुआ, कब्जे की प्रकृति क्या है और क्या संपत्ति के वास्तविक स्वामी को ऐसे कब्जे की जानकारी है अथवा नहीं। ऐसे मामलों में मात्र यह कह देना पर्याप्त नहीं है कि वेदी कुछ वर्षों से संपत्ति पर निर्विघ्न कब्जा धारण किये हुए है।

धारा 8 आधिपत्य रखने वाले ऐसे व्यक्ति पर जो, स्वामी नहीं है, अविलम्ब आधिपत्य प्राप्त करने के लिए अधिकृत व्यक्ति को आधिपत्य परिदान करने का दायित्व अधिरोपित करती है।

निम्नलिखित अवस्थाओं में, ऐसे किसी व्यक्ति को, जो किसी विशिष्ट चल संपत्ति पर अपना आधिपत्य या नियंत्रण स्थापित किये हुए है, जिसका कि वह स्वामी नहीं है किसी ऐसे व्यक्ति को, जो उसका अविलम्ब आधिपत्य प्राप्त करने को अधिकृत है, उसका परिदान करने के लिए बाध्य किया जा सकेगा -

- (i) वादी द्वारा दावाकृत वस्तु प्रतिवादी वादी के अभिकर्ता या न्यासधारी के रूप में धारण किये हुए है।
- (ii) जबकि दावाकृत वस्तु के लिए, उस वस्तु की हानि के बदले में धन के रूप में दिया गया प्रतिकार पर्याप्त नहीं होगा।

(iii) जबकि उस वस्तु की हानि के बदले उसकी क्षतिपूर्ति की निर्धारण अत्यन्त ही कठिन होगा।

(iv) जबकि दावाकृत वस्तु का आधिपत्य वादी से दोषपूर्ण ढंग से पूर्णतः हस्तांतरित करा दिया गया हो।

जब तब कि कोई प्रतिकूल बात सिद्ध नहीं कर दी जाती, उपखंड (i) और (ii) के अन्तर्गत दावाकृत वस्तु के सम्बन्ध में न्यायालय यह उपधारण करेगा कि -

- (i) दावाकृत वस्तु की हानि के बदले में क्षतिपूर्ति धन पर्याप्त नहीं होगा, एवं
- (ii) ऐसी वस्तु की हानि के लिए उसके बदले में क्षतिपूर्ति का निर्धारण करना अत्यन्त ही कठिन होगा।

दृष्टान्त

- (क) अ अपनी विदेश यात्रा के दौरान अपना फर्नीचर ब को अभिकर्ता के रूप में सौंपता है एवं ब बिना अ की सहमति के उसे स के पास गिरवी रख देता है, जबकि स यह जानता है कि ब को उन्हे गिरवी रखने का अधिकार नहीं है। स से फर्नीचर अ को दिलाया जा सकेगा, चूंकि यहाँ स की स्थिति न्यासधारी की है।
- (ख) अ एक ऐसी पारिवारिक मूर्ति को अपने आधिपत्य में धारण किए हुए है जिस पर कि वास्तव में ब का अधिकार है ब अ से वह मूर्ति प्राप्त करने का अधिकारी होगा।
- (ग) अ ब के एक ऐसे चित्र पर अपना आधिपत्य बनाये हुए है जो कि एक मृतक चित्रकार द्वारा बनाया गया है एवं दुर्लभ चित्र है। ऐसे चित्र के बाजार-मूल्य का निर्धारण नहीं किया जा सकता, अतः अ को उक्त चित्र ब को लौटाने के लिए बाध्य किया जा सकेगा।

इस धारा में किसी ऐसी विशिष्ट चल संपत्ति, जिस पर ऐसा व्यक्ति आधिपत्य धारण किये हुए है जो कि वास्तव में उसका स्वामी नहीं है, को ऐसे व्यक्ति को देने के लिए बाध्य करने का प्रावधान है, जो कि वास्तव में उस पर अविलम्ब आधिपत्य प्राप्त करने का अधिकारी है।

धारा 8 की अपेक्षाएँ

धारा 8 में उपबंधित प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि इसके प्रयोज्य होने के लिए निम्नलिखित अपेक्षाओं का पूरा किया जाना आवश्यक है -

- (i) वस्तु का आधिपत्य या नियंत्रण प्रतिवादी के पास हो।
- (ii) दावाकृत वस्तु चल संपत्ति हो।
- (iii) प्रतिवादी उसका स्वामी नहीं हो।
- (iv) वादी दावाकृत वस्तु का अविलम्ब आधिपत्य प्राप्त करने के लिए अधिकृत हो।
- (v) प्रतिवादी वस्तु को अभिकर्ता या न्यासधारी के रूप में धारण किये हुए हो
- (क) वस्तु ऐसी हो, जिसकी हानि के लिए यदि क्षतिपूर्ति दी जाये तो वह पर्याप्त अनुतोष नहीं होगा।
- (ख) वस्तु की क्षतिपूर्ति का निर्धारण किया जाना अत्यन्त कठिन हो।

धारा 8 का उद्देश्य

धारा 8 का एकमात्र उद्देश्य ऐसे व्यक्ति को किसी विशिष्ट चल संपत्ति के आधिपत्य या नियंत्रण का ऐसे व्यक्ति को परिदान करने के लिए बाध्य करना है जो कि वास्तव में उसको अविलम्ब प्राप्त करने के लिए अधिकृत है।

धारा 7 व 8 में अंतर

यद्यपि धारा 7 एवं 8 दोनों ही चल संपत्ति के आधिपत्य की पुनः प्राप्ति के बारे में प्रावधान करती हैं, पर इन दोनों में कुछ अंतर पाया जाता है-

- (1) धारा 7 के अंतर्गत किसी चल संपत्ति पर विशिष्ट या अस्थायी अधिकार रखने वाले व्यक्ति भी उसके स्वामी के विरुद्ध वाद संस्थित कर सकता है।
- (2) जबकि धारा 8 के अंतर्गत यदि वस्तु पर आधिपत्य या नियंत्रण रखने वाला व्यक्ति उसका स्वामी है तो उसके विरुद्ध वाद संस्थित नहीं किया जा सकता।
- (3) धारा 7 के अंतर्गत वस्तु के बदले आर्थिक प्रतिकर का अनुतोष भी माँगा जा सकता है।
- (4) लेकिन धारा 8 ऐसा विकल्प नहीं देती, क्योंकि धारा 8 के अंतर्गत आर्थिक प्रतिकर या तो अपर्याप्त होता है या उसका निर्धारण अत्यन्त कठिन होता है।

विशेष

दावाकर्ता व्यक्ति किसी चल संपत्ति को जब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह उस पर प्रतिवादी का आधिपत्य या नियंत्रण सिद्ध नहीं कर दे।

अध्याय - 4 संविदाओं का विनिर्दिष्ट अनुपालन

संविदा से अभिप्राय पक्षकारों के मध्य, किसी प्रतिफल के बदले, किसी कार्य को करने या करने से प्रतिविरत रहने का ऐसा करार है, जिसका यदि कोई पक्षकार पालन नहीं करता है तो वह संविदा-भंग का दोषी समझा जाता है। दूसरे पक्षकार को उसके विरुद्ध दो उपचार वैकल्पिकतः प्राप्त होते हैं -

- (1) संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए वाद का अधिकार, एवं
- (2) क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम प्रथमतः विशिष्ट अनुपालन के उपचार को सहत्व देता है एवं यही उसके अध्ययन का विषय है। यदि हमेशा ही संविदा के भंग पर क्षतिपूर्ति दिलाये जाने के आदेश दिया गया तो संविदा के मूल उद्देश्य की पूर्ति होना असम्भव हो जायेगा, क्योंकि कुछ संविदायें ऐसी होती हैं जिनके भंग किये जाने पर दिया जाने वाला आर्थिक प्रतिकर या तो अपर्याप्त होता है या फिर उस प्रतिकर का निर्धारण किया जाना ही असम्भव होता है। अतः ऐसी संविदाओं में न्यायालय उनके विशिष्ट अनुपालन का ही आदेश देता है।

अधिनियम की धारा 9 से 25 तक संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है।

संविदा के विशिष्ट अनुपालन का अर्थ पक्षकारों द्वारा उस कार्य को करने या करने से प्रतिविरत रहने से है, जो उसने करने या करने से प्रतिविरत रहने का वचन दिया है।

धारा 9 - संविदा पर आधारित अनुतोष के वादों में प्रतिवाद

जहाँ तक इसमें अन्यथा उपबंधित नहीं किया गया हो, ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए वाद संस्थित किया गया है, प्रतिरक्षा के उन आधारों द्वारा वाद का प्रतिवाद कर सकता है जो उसकी संविदा से सम्बन्धित विधि के अन्तर्गत प्राप्त है।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 9 एक नयी उपलब्धि है। यह धारा संविदा के विशिष्ट अनुपालन के वाद में प्रतिवादों को एक नया उपचार प्रदान करती है। प्रतिवादी ऐसे आधारों पर जो कि उसे संविदा विधि के अंतर्गत प्राप्त है, ऐसे वादों में का प्रतिवाद कर सकता है। उदाहरणार्थ प्रतिवादी यह तर्क प्रस्तुत कर सकता है कि संविदा इस कारण शून्य है कि अक्षम पक्षकारों द्वारा निष्पादित की गई है या यह वह उत्पीड़न, कपट, मिथ्या-व्यपदेशन, अनुचित प्रभाव या भ्रम के अंतर्गत की गई है। अतः शून्यकरणीय है।

संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए समय का महत्व - इस प्रश्न पर कि समय संविदा का सार है विभिन्न मत प्रचलित है। लेकिन भारतीय न्यायालयों ने अपने विभिन्न निर्णयों में यह मत व्यक्त किया है कि अचल सम्पत्ति के विक्रय की संविदाओं में समय ही संविदा का सार नहीं है, जब तब कि सम्पत्ति की प्रकृति या परिस्थितियाँ ऐसा सिद्ध नहीं कर दे। संविदाओं के मामलों में न्यायालय मुख्यतः पक्षकारों के आशय को महत्व देता है। लेकिन यदि संविदाओं का उद्देश्य व्यावसायिक प्रकृति का हो, जैसे कारखानों के निर्माण के लिए भूमि क्रय करने की संविदा, तो न्यायालय ऐसी संविदाओं में समय को महत्वपूर्ण स्थान देगा। किसी संविदा के विनिर्दिष्ट की अध्यर्थना को मात्र इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए कि संविदा किसी एक पक्षकार के विकल्प पर अप्रवर्तनीय है।

धारा 10 - वे अवस्थाएँ जिनमें संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन कराया जा सकता है -

जहाँ तक इस अध्याय में अन्यथा उपबंधित नहीं हो, न्यायालय निम्नलिखित अवस्थाओं में अपने विवेकानुसार किसी भी संविदा का विशिष्ट अनुपालन करवा सकेगा जबकि-

(1) जिस कार्य को किये जाने का करार हुआ है, उसको नहीं किये जाने पर होने वाली वास्तविक क्षति के निर्धारण का कोई मापदंड नहीं है।

(2) जिस कार्य को किये जाने का करार हुआ है, उसको नहीं किये जाने पर दिया जाने वाला धन के रूप में प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष नहीं होगा।

जब तक कि प्रतिकूल सिद्ध नहीं कर दिया जाये, न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि-

(i) अचल संपत्ति के हस्तांतरण की संविदा का भंग किये जाने पर धन के रूप में प्रतिकर द्वारा पर्याप्त अनुतोष नहीं दिया जा सकता।

(ii) चल सम्पत्ति के हस्तांतरण की संविदा के भंग किये जाने पर निम्नलिखित अवस्थाओं में के सिवाय धन के रूप में प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष हो सकता है -

(क) जब कि संपत्ति व्यापार की कोई सामान्य वस्तु नहीं है, या वादी के विशिष्ट हित या मूल्य की वस्तु है या ऐसी कोई वस्तु सम्मिलित करती है जो बाजार में सरलता से उपलब्ध नहीं हो सकती। (Pretium Off Lestie)

(ख) जहाँ कि प्रतिवादी संपत्ति को न्यायधारी या अभिकर्ता के रूप में धारण किये हुए है।

यह धारा उन अवस्थाओं का उल्लेख करती है, जिनमें किसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन कराया जा सकता है। सामान्यतः संविदाएँ ऐसी होती हैं जिनका यदि विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया गया तो पक्षकारों की कोई विशेष क्षति नहीं होती है और आर्थिक प्रतिकर के रूप में उसकी क्षतिपूर्ति की जा सकती है। लेकिन सदा ही ऐसा नहीं होता। कुछ संविदाएँ इस प्रकृति की होती हैं। जिनका विशिष्ट अनुपालन ही करवाना होता है और यही इस धारा का मुख्य उद्देश्य है। ऐसी संविदाएँ निम्नलिखित हैं।

(1) क्षतिपूर्ति के निर्धारण के मापदंड का अभाव - कुछ संविदाएँ ऐसी संपत्ति के सम्बन्ध में होती हैं, जिनका यदि विशिष्ट अनुपालन नहीं किया गया तो उसके बदले में क्षतिपूर्ति का निर्धारण नहीं किया जा सकता।

अ एवं ब के बीच एक ऐसा करार हुआ है जिसमें अ ने ब से ऐसे चित्र क्रय करने का और ब ने अ को विक्रय करने का वचन दिया है, जिसको बनाने वाले की मृत्यु हो चुकी है। यदि इस संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं किया गया तो उस चित्र के बदले में क्षतिपूर्ति करने का कोई मापदंड नहीं होगा। क्योंकि वह दुर्लभ चित्र है जिसको कि बनाने वाला मर चुका है।

(2) आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष नहीं - ऐसी संविदाएँ जिनका विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जाकर उनके बदले में क्षतिपूर्ति का निर्धारण कर दिया जाता है। पर यह क्षतिपूर्ति पर्याप्त नहीं होता है। अतः ऐसी संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन ही करवाया जाता है।

अ ब से रेलवे के कुछ विशिष्ट वर्णन के अंश क्रय करने की संविदा करता है। ब अंश देने से इंकार कर देता है। अ ब को अंश देने के लिए बाध्य कर सकता है क्योंकि अंश सीमित मात्रा में है एवं बाजार में उपलब्ध नहीं है अतः उनके बदले में दिया जाने वाला आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त नहीं हो सकता।

(3) आर्थिक प्रतिकर प्राप्त करना असम्भव हो - जहाँ संविदा ऐसी हो, जिनका विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जाकर बदले में प्रतिकर दिया जाना हो एवं वह प्रतिकर पर्याप्त भी हो, पर उसका प्राप्त किया जाना असम्भव हो तो ऐसी संविदा का विशिष्ट अनुपालन ही करवाया जायेगा।

अ ने प्रतिफल के बदले में एक वचन-पत्र बिना किसी पृष्ठांकन के ब को हस्तांतरित कर दिया। उसके पश्चात् अ दिवालिया हो जाता है और स उसका अभिहस्ताकिती नियुक्त हुआ है। यदि वचनपत्र पर पृष्ठांकन नहीं करने के लिए आर्थिक प्रतिकर की आज्ञा प्राप्त की गई है तो वह व्यर्थ होगी।

कुछ स्पष्टीकरण - चल सम्पत्ति के हस्तांतरण की संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन तभी करवाया जा सकेगा, जब कि ऐसी चल सम्पत्ति असाधारण खूबसूरत विशिष्ट एवं अपूर्ण हो। किसी साझेदारी व्यापार के अंशों के विक्रय करने की संविदा का भी विशिष्ट अनुपालन करवाया जा सकेगा। विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा अनुदत्त करना न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति है।

इस सम्बन्ध में रवि सिंघल बनाम मीमाली सिंघल का एक अच्छा मामला है। इसमें पति एवं पत्नी के बीच एक पारिवारिक समझौता हुआ था। समझौते के अनुसार पति द्वारा पत्नी को रहने के लिए आवास, भरण-पोषण की राशि तथा पुत्रियों के लिए विद्यालय शुल्क आदि का संदाय किया जाना था। पत्नी द्वारा समझौते के पालना हेतु वाद संस्थित किया गया। न्यायालय द्वारा यह अंतरिम आदेश पारित किया गया कि पति पत्नी को रहने के लिए आवास, भरण-पोषण की राशि तथा पुत्रियों के लिए विद्यालय शुल्क का संदाय करें। उच्चतम न्यायालय ने इसे न्यायालय के विवेकाधिकार के अधीन पारित आदेश माना तथा उसमें हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया।

ऐसा ही मत आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय का भी है। आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने एक मामले में यह कहा है कि विशिष्ट अनुपालन की डिक्री पारित करना न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति के अंतर्गत है, लेकिन न्यायालय को इस शक्ति का प्रयोग न्यायिक तौर पर करना चाहिए।

उत्तर प्रदेश स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड, लखनऊ बनाम राम बराय प्रसाद और अन्य का मामला - इस मामले में कोयले की राख के क्रय-विक्रय की संविदा को विशिष्ट अनुपालन के प्रवर्तन योग्य माना गया क्योंकि -

- (i) यह वाणिज्य की साधारण वस्तु नहीं है।
- (ii) यह बाजार में आसानी से उपलब्ध भी नहीं हो सकती है, एवं
- (iii) धन में प्रतिकर का भुगतान पर्याप्त अनुतोष नहीं हो सकता।

धारा 11 - वे अवस्थायें जिनमें न्यास से सम्बन्धित संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन कराया जा सकता है -

(1) जहाँ कि इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित नहीं किया गया हो, न्यायालय अपने विवेकानुसार ऐसी संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन करवा सकेगा जिसमें कि ऐसे किसी कार्य को किये जाने का करार हुआ है, जो कि न्यास के पूर्णतया या अंशतः पालन में है।

(2) ऐसी संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता जो कि किसी न्यासधारी ने अपनी शक्तियों से बाहर की है या न्यास-भंग में निर्मित की है।

अधिनियम की धारा 11 न्यास से सम्बन्धित संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन का उल्लेख करती है। इस धारा का उद्देश्य न्यास को हित प्रदान करना है। ऐसे किसी कार्य को करने

का करार जो कि न्यास के पूर्णतः या अंशतः पालन में है, विशिष्ट अनुपालन के लिए प्रवर्तनाय होगा। पर यह न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति के अंतर्गत होगा। लेकिन ऐसे किसी कार्य को करने की संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकेगा जो कि न्यासधारी द्वारा अपनी शक्तियों के बाहर या न्यास-भंग में की गई है।

(1) अ किसी भूमि का न्यासधारी है एवं उसे उस भूमि को सात वर्ष तक के लिए पट्टे पर देने का अधिकार है वह उस भूमि को ब को सात वर्ष के लिए पट्टे पर देने की संविदा इस शर्त पर करता है कि सात वर्ष के पूर्ण हो जाने पर उसका नवीनीकरण किया जा सकेगा। इस संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता, क्योंकि न्यासधारी को सात वर्ष से अधिक समय के लिए भूमि को पट्टे पर देने का अधिकार नहीं है।

(2) अ एक न्यासधारी को किसी न्यास की संपत्ति को एक लाख रुपये में विक्रय करता है। वह ब से उसे तीस हजार रुपये में विक्रय करने की संविदा कर लेता है। ब इस संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवा सकता, क्योंकि यह न्यास-भंग की संविदा है।

धारा 12 संविदा के भाग का विशिष्ट अनुपालन

(1) जहाँ तक कि इस धारा में आगे उपबंधित किया गया है, के सिवाय न्यायालय किसी संविदा के भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश नहीं देगा।

(2) जहाँ कि संविदा का कोई पक्षकार संविदा के पूर्ण भाग का पालन करने में असमर्थ है, लेकिन ऐसा पालन नहीं किया जाने वाला भाग उसके पूर्ण भाग से मूल्य में बहुत कम है एवं वह भाग ऐसा है, जिसके लिए आर्थिक प्रतिकर दिया जा सकता है, वहाँ न्यायालय किसी पक्षकार द्वारा वाद संस्थित किये जाने पर उस संविदा के उतने भाग का विशिष्ट अनुपालन करने का निर्देश दे सकेगा, जितने का कि विशिष्ट अनुपालन करवाया जा सकता है एवं बचे हुए भाग के लिए आर्थिक प्रतिकर दिया जा सकेगा।

(3) जहाँ कि संविदा का कोई पक्षकार उस संविदा के अपने पूर्ण भाग का पालन में करने असमर्थ है और ऐसा पालन नहीं किया जाने वाला भाग या तो -

- (i) संपूर्ण का एक बहुत बड़ा भाग है, यद्यपि धन के रूप में प्रतिकर दिया जा सकता है, या
- (ii) उसका धन के रूप में प्रतिकर नहीं दिया जा सकता है।

वहाँ, वह विशिष्ट अनुपालन की आपत्ति प्राप्त करने के लिए अधिकृत नहीं है, लेकिन दूसरे पक्षकार द्वारा वाद संस्थित किये जाने पर न्यायालय चूक करने वाले पक्षकार को संविदा के उतने भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश दे सकेगा, जितने का वह अनुपालन कर सकता है, यदि अन्य पक्षकार-

(क) खंड (i) के अंतर्गत आने वाले मामले में पूर्ण संविदा के लिए किये गये करार के प्रतिफल में से पालन नहीं किये गये भाग के प्रतिफल को घटाकर भुगतान करता है या कर चुका है, एवं

(ख) खंड (ii) के अंतर्गत आने वाले मामले में बिना किसी प्रकार से कमी किये हुए संविदा के पूर्ण प्रतिफल का भुगतान करता है या कर चुका है तथा दोनों में से किसी मामले में संविदा के बचे हुए भाग के पालन के लिए अपने सारे दावों और अधिकारों को त्याग देता है, या तो किसी कमी के लिए या हानि के लिए या क्षति के लिए जो उसने प्रतिवादी की चूक द्वारा वहन की है।

(4) जबकि किसी संविदा का ऐसा कोई भाग जिसका विशिष्ट अनुपालन किया जा सकता है या किया जाना चाहिए, उस भाग से पृथक एवं स्वतंत्र है जिसका कि विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जा सकता है, तो न्यायालय पूर्व भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश दे सकेगा।

यह धारा किसी संविदा के भाग के विशिष्ट अनुपालन का उल्लेख करती है।

धारा 12(1) के अनुसार सामान्यतः न्यायालय किसी संविदा के भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश नहीं देगा। किसी संविदा का पालन किया जाना है तो संपूर्ण संविदा का पालन किया जाना चाहिए। लेकिन इस सामान्य नियम के कुछ अपवाद हैं जो धारा 12(2), 12(3) एवं 12(4) में उल्लिखित हैं।

धारा 12(2) के लिए निम्नलिखित शर्तों का पूरा किया जाना आवश्यक है-

- (i) वह भाग जिसका विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जा सकता हो, संपूर्ण का एक छोटा भाग हो,
- (ii) उसका आर्थिक प्रतिकर दिया जा सकता हो, एवं
- (iii) ऐसे आर्थिक प्रतिकर का भुगतान किया जा चुका हो।

अ एक 100 बीघे का भू-खंड ब को विक्रय करने की संविदा करता है। लेकिन बाद में यह पाया जाता है कि उस भूमि में से 98 बीघा भूमि अ की है एवं 2 बीघा भूमि किसी अन्य व्यक्ति की है जो उसका विक्रय नहीं करना चाहता है। यह 2 बीघा भूमि ऐसी है जिसका 98 बीघा भूमि के प्रयोग के लिए कोई महत्त्व नहीं है एवं उसका आर्थिक प्रतिकर भी दिया जा सकता है। अतः ऐसी स्थिति में ब द्वारा बाद संस्थित किये जाने पर न्यायालय यह निर्देश दे सकता है कि अ 98 बीघा भूमि ब को हस्तांतरित कर दे एवं शेष 2 बीघा के लिए उसे आर्थिक प्रतिकर दे दे, या ब को न्यायालय यह निर्देश दे सकता है कि वह 98 बीघा के क्रय-धन में से 2 बीघा के आर्थिक प्रतिकर को हटाकर शेष अ को भुगतान कर दे।

धारा 12(3) के पालन के लिए निम्नलिखित शर्तों की पूर्ति की अपेक्षा की जाती है -

- (i) संविदा का वह भाग, जिसका विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जा सकता, उसके पालन किये जा सकने वाले भाग से बहुत बड़ा हो,
- (ii) वह भाग ऐसा हो जिसका आर्थिक प्रतिकर नहीं दिया जा सकता हो;
- (iii) लेकिन चूक करने वाले पक्षकार को छोड़कर दूसरा पक्षकार उसके आंशिक पालन के लिये वाद संस्थित कर सकता है।
- (iv) ऐसे पक्षकार द्वारा आगे के लिये पालन के साथ दावों एवं प्रतिवादी की चूक के कारण पहुँची क्षति या हानि के लिए प्रतिकार के सब अधिकारों का त्याग कर दिया जाना आवश्यक है।

दृष्टान्त

अ अपनी 100 बीघा भूमि को विक्रय करने की संविदा करता है। बाद में यह पाया जाता है कि 40 बीघा भूमि को लेने को तैयार हो एवं अ की चूक के कारण पहुँची क्षति या हानि के लिये प्रतिकर के सब दावों को छोड़ने के लिए तैयार हों तो ब अ से 40 बीघा भूमि प्राप्त करने के लिए अंज्ञप्ति का अधिकारी है।

पालन करने में असमर्थता - संविदा के पालन की असमर्थता किसी भी कारण से उत्पन्न हो सकती है, जैसे-

- (i) विषय-वस्तु की मात्रा में कमी आ जाना;
- (ii) क्वालिटी में अंतर आ जाना;
- (iii) स्वत्व में त्रुटि पाया जाना;
- (iv) विधितया क्रय-विक्रय निषेधित कर दिया जाना;
- (v) अन्य कोई कारण।

एक मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि कृषि भूमि के विक्रय के करार में प्रत्यर्थी जहाँ करार के अपने भाग का पालन करने के लिए सदैव इच्छुक एवं तत्पर रहा हो, वहाँ विनिर्दिष्ट अनुपालन की डिग्री के लिए मात्र इस आधार पर इंकार नहीं किया जा सकता है कि वाद के विचारण के दौरान सम्पत्ति का कब्जा किसी अन्य व्यक्ति के हाथों में चला गया है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संविदा के भाग का विनिर्दिष्ट अनुपालन अपील के स्तर पर भी अनुदत्त किया जा सकता है; क्योंकि अपील बाद की एक चिरंस्तर प्रक्रिया है।

धारा 12(4) विभाजन या पृथक्करणीयता के सिद्धांत पर आधारित है। यह किसी संविदा के ऐसे भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश देती है जिसका कि पालन किया जा सकता हो एवं जो संविदा दो पृथक् एवं स्वतंत्र प्रसंविदाओं से निर्मित हुई हो, एवं जिसमें से एक का पालन किया जा सकता हो एवं दूसरे का नहीं तो न्यायालय प्रथम भाग के विशिष्ट अनुपालन का निर्देश दे सकेगा।

धारा 13 स्वत्व नहीं रखने वाले या अपूर्ण स्वत्व रखने वाले व्यक्ति के विरुद्ध क्रेता या पट्टाग्रहीता के अधिकार के बारे में उपलब्ध करती है।

अपूर्ण स्वत्व से अभिप्राय यह नहीं है कि उस पर बिल्कुल ही स्वत्व नहीं है।

क्रेता या पट्टाग्रहीता का अधिकार - जहाँ विक्रेता या पट्टाकर्ता ऐसी सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे पर देने की संविदा कर लेता है, जिस पर कि उसका स्वत्व नहीं है या अपूर्ण स्वत्व है तो उसके विरुद्ध क्रेता या पट्टाग्रहीता को धारा 13 के अंतर्गत चार तरह के अधिकार उपलब्ध हैं तथा -

(1) हित-वर्धन पर अधिकार - धारा 13 (i) के अनुसार जब विक्रेता या पट्टाकर्ता विक्रय या पट्टे की संविदा कर लेने के पश्चात् सम्पत्ति में कोई हित अर्जित कर लेता है तो क्रेता या पट्टाग्रहीता को ऐसे हित में से संविदा के पालन के लिये विक्रेता या पट्टाकर्ता को बाध्य करने का अधिकार होता है (धारा 43 सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम)

अ एक ऐसे मकान को ब को बेचने की संविदा करता है, जो वास्तव में ब का है, पर आगे चलकर वही मकान ब द्वारा अ को दान में प्राप्त हो जाता है। ब अ के विरुद्ध संविदा के विशिष्ट अनुपालन का अधिकारी है।

(2) सहमति प्राप्ति करने के संबंध में अधिकार - धारा 13(ii) के अनुसार जहाँ विक्रेता या पट्टाकर्ता के लिये यह आवश्यक है कि वे स्वत्व के मान्य होने के लिये अन्य व्यक्तियों की सहमति प्राप्त करें और ऐसे व्यक्ति प्रार्थना पर सहमति देने के लिए बद्ध हों तो क्रेता या पट्टाग्रहीता विक्रेता या पट्टाकर्ता को ऐसी सहमति प्राप्त करने के लिए विवश कर सकेंगे।

(3) बंधक की अवस्था में अधिकार - धारा 13(iii) के अनुसार जहाँ विक्रेता या पट्टाकर्ता सम्पत्ति को भारहित विक्रय या पट्टे पर देना प्रकट करता है, पर वह सम्पत्ति उतने धन तक के लिए बंधक है जो क्रय-धन से अधिक नहीं है तो क्रेता या पट्टाग्रहीता को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं-

(1) कि वह बंधक-मोचन के लिए बाध्य करे।

(2) बंधक से मान्य उन्मुक्ति प्राप्त करे।

(3) बंधकग्रहीता से अभिहस्तांतरण प्राप्त करे।

(4) अग्रिम-प्राप्ति का अधिकार - धारा 13(iv) क्रेता या पट्टाग्रहीता को एक महत्वपूर्ण एवं विस्तृत अधिकार या उपचार प्रदान करती है। जब संविदा के विशिष्ट अनुपालन का वाद स्वत्व के अभाव में या अपूर्ण स्वत्व की अवस्था में निरस्त कर दिया जाता है तो ऐसी अवस्था में क्रेता या पट्टाग्रहीता का निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं -

(i) अग्रिम धनराशि मय ब्याज के पुनः प्राप्त करने का अधिकार।

(ii) वाद-व्यय प्राप्त करने का अधिकार।

(iii) संविदा में की विषय-वस्तु पर धारणाधिकार बनाये रखने का अधिकार।

यदि विक्रेता के अपूर्ण स्वत्व या स्वत्व के अभाव में संविदा का पालन नहीं किया जा सकता है तो क्रेता अपनी अग्रिम राशि को पुनः प्राप्त करने का अधिकारी होता है। चल सम्पत्ति के विक्रय या किराये पर लेने की संविदा के संदर्भ में उपरोक्त उपबंध लागू होंगे।

संविदाएं जिनका विनिर्दिष्टः प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता है-

14. संविदाएं जो विनिर्दिष्टः प्रवर्तनीय नहीं है-(1) निम्नलिखित संविदाएं विनिर्दिष्टः प्रवर्तित नहीं कराई जा सकती, अर्थात् :-

(क) वह संविदा जिसके अपालन के लिए धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष हो;

(ख) वह संविदा जिसमें सूक्ष्म या बहुत से ब्यौरे हों अथवा जो पक्षकारों को वैयक्तिक अर्हताओं या स्वेच्छा पर इतनी आश्रित हो अथवा अन्यथा अपनी प्रकृति के कारण ऐसी हो कि न्यायालय उसके तात्त्विक निबन्धनों के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन न करा सकता हो;

(ग) वह संविदा जो अपनी प्रकृति से ही पर्यवसेय हो;

(घ) वह संविदा जिसके पालन में ऐसा सतत्-कर्तव्य का पालन अन्तर्वलित है जिसका न्यायालय पर्यवेक्षण न कर सके।

(2) माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) में यथा उपबन्धित के सिवाय वर्तमान या भावी मतभेदों को माध्यस्थम् के लिए निर्देशन करने की कोई भी संविदा विनिर्दिष्टः प्रवर्तित नहीं की जाएगी; किन्तु यदि कोई व्यक्ति जिसने (ऐसे माध्यस्थम्-करार से, जिसे उक्त अधिनियम के उपबन्ध लागू होते हों, भिन्न) ऐसी संविदा की हो और उसका पालन करने से इन्कार कर दिया हो, किसी ऐसे विषय के बारे में वाद लाए, जिसके निर्देशन की उसने संविदा की है, तो ऐसी संविदा का अस्तित्व उस वाद का वर्जन करेगा।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) या खण्ड (घ) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी न्यायालय निम्नलिखित दशाओं में विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करा सकेगा-

(क) जहाँ कि वाद ऐसी संविदा के प्रवर्तन के लिए हो, जो-

(i) किसी ऐसे ऋण के प्रति संदाय को प्रतिभूति करने के लिए, जिसे उधार लेने वाला तत्क्षण प्रतिसंदत्त करने को रजामन्द न हो, बन्धन निष्पादन करने या कोई अन्य प्रतिभूति देने के लिए हो;

परन्तु जहाँ कि उधार का अवशिष्ट भाग देने को रजामन्द हो, अथवा

(ii) किसी कम्पनी के कोई डिबेंचर लेने और उनके निमित्त संदाय करने के लिए हो;

(ख) जहाँ कि वाद-

(i) भागीदारी के प्ररूपिक विलेख के निष्पादन के लिए हो, यदि भागीदारी के कारबार का चलाना पक्षकारों ने प्रारम्भ कर दिया हो; अथवा

(ii) किसी फर्म के भागीदारी के अंश के क्रय के लिए हो;

(ग) जहाँ कि वाद ऐसी संविदा का प्रवर्तन कराने के लिए हो जो कोई निर्माण तैयार करने के लिए या भूमि पर कोई अन्य संकर्म के निष्पादन के लिए है:

परन्तु यह तब जब कि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाए, अर्थात्-

(i) निर्माण या अन्य संकर्म संविदा में पर्याप्त रूप से प्रमित शब्दों में ऐसे वर्णित हों कि न्यायालय निर्माण या संकर्म की ठीक-ठीक प्रकृति का अवधारणा करने में समर्थ हो सके;

(ii) संविदा के पालन में वादी का स्वरभूत हित हो और हित भी ऐसी प्रकृति का हो कि धन के रूप में प्रतिकर उसके अपालन के लिए ब्याधायक अनुतोष न हो; तथा

(iii) संविदा के अनुसरण में प्रतिवादी ने उस समस्त भूमि का या उसके किसी भाग का कब्जा अभिप्राप्त कर लिया हो जिस पर निर्माण तैयार या अन्य संकर्म निष्पादित किया जाना चाहिए।

वे व्यक्ति जिनके पक्ष में या विरुद्ध संविदाएँ विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित की जा सकेंगी।

अधिनियम की धारा 14 के प्रावधान धारा 10 के ठीक विपरीत हैं। जहाँ धारा 10 उन संविदाओं का उल्लेख करती है जिनका कि विशिष्ट अनुपालन किया जा सकता है, वहीं धारा 14 उन संविदाओं के बारे में प्रावधान करती है जिनका कि विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जा सकता। अधिनियम की धारा 14(1) के अंतर्गत निम्नलिखित संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन नहीं किया जा सकता।

(1) जहाँ आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष हो - ऐसी संविदायें जिनके लिए आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष हो तो उनके विशिष्ट अनुपालन का निर्देश नहीं दिया जायेगा। सामान्यतः ऋण पर रूपयों के लेन-देन की संविदायें इस श्रेणी में आती हैं। चाहे ऐसा ऋण प्रतिभूति पर लिया गया हो या अन्यथा, इस प्रकार जहाँ तक आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त समझा जाता हो, वहाँ विशिष्ट अनुपालन सम्भव नहीं होता।

अ को ब 100 रुपये प्रति टीन के हिसाब से 100 टीन तेल देने की संविदा करता है, लेकिन वह संविदा के पालन में असमर्थ रहता है अ ब को टीन देने के लिए बाध्य नहीं कर सकता, क्योंकि धन के रूप में प्रतिकर द्वारा अनुतोष प्रदान किया जा सकता है जो दोनों पक्षकारों के लिए उपयुक्त होगा। ऐसी संविदायें जो प्रतिवादी द्वारा विखंडनीय हैं, का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता। इस प्रकार ऐच्छिक साझेदारी फर्म में प्रवेश की संविदा का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता।

(2) - संविदायें जिनमें व्यक्तिगत सेवायें अंतर्गस्त हों - ऐसी संविदायें जिनका पालन पक्षकार की व्यक्तिगत अर्हताओं पर आधारित हों, का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता। क्योंकि ऐसी सेवाओं की पूर्ति पक्षकारों की स्वेच्छा से ही की जा सकती है, उसे उसके लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

सामान्यतः व्यक्तिगत सेवाओं, पुस्तक लिखने, चित्र बनाने, विवाह आदि की संविदायें इसके अंतर्गत आती हैं।

अब के यहाँ किसी पद पर कार्य करने की संविदा करता है या एक पुस्तक लिखने की संविदा करता है, अब उसे सेवा के लिए या पुस्तक लिखने के लिये बाध्य नहीं कर सकता। ऐसी संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जाकर क्षतिपूर्ति प्राप्त की जा सकती है। इस सम्बन्ध में लम्बी विरुद्ध वैग्रर का एक दृष्टात्मक प्रकरण है। कु० वैग्रर ने लम्बी की रंगशाला में एक निश्चित अवधि तक के लिये गाने की संविदा की। कुछ समय पश्चात् ही उसने गाना बंद कर दिया। लम्बी कु० वैग्रर के विरुद्ध गाने की क्षतिपूर्ति प्राप्त नहीं कर सकता, यद्यपि वह क्षतिपूर्ति के लिये वाद संस्थित कर सकता है। गाना एक व्यक्तिगत योग्यता है जिसके लिये बाध्य नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार नियोजन सम्बन्धी संविदाओं का विनिर्दिष्ट अनुपालन नहीं कराया जा सकता है क्योंकि ऐसी बाध्यता मूलाधिकारों व मानवाधिकारों के विरुद्ध होगी।

(3) समाप्य प्रकृति की संविदायें - ऐसे किसी कार्य को करने की संविदा जो कि किसी भी पक्षकार द्वारा कभी भी विखंडनीय हो या जिसको समाप्त किया जा सकता हो, उसका विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता।

अब एवं एक संविदा द्वारा किसी व्यवसाय में साझेदार बनते हैं, लेकिन साझेदारी की अवधि का निर्धारण नहीं किया गया है। ऐसी संविदा का प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता, क्योंकि यदि ऐसी संविदा का प्रवर्तन कराया गया तो कोई भी साझेदार तुरन्त ही उसे विघटित कर सकता है।

(4) संविदायें जिनके पालन के लिये न्यायालय का निरंतर पर्यवेक्षण आवश्यक हो - ऐसी संविदायें जिनमें निरंतर कार्य करने का करार हो न्यायालय उनके विशिष्ट अनुपालन का निर्देश नहीं देगा। क्योंकि न्यायालय निरंतर पर्यवेक्षण वाले कार्यों के विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा देना उचित एवं सम्भव नहीं समझता। लेकिन यह प्रावधान निरंतर धन के देय की संविदायें पर लागू नहीं होता जैसे वार्षिकी आदि। यही कारण है कि भवन-निर्माण एवं मरम्मत की संविदायें का भी प्रवर्तन नहीं करवाया जाता। क्योंकि इनमें भी निरंतर पर्यवेक्षण की आवश्यकता रहती है। ऐसा ही एक मामला गौहाटी उच्च न्यायालय का है। जिसमें वादी ने एक वाद इस आशय का संस्थित किया कि न्यायालय टेलीफोन विभाग को इस प्रकार के निर्देश दे कि वादी का टेलीफोन ठीक प्रकार से काम करता रहे। न्यायालय ने ऐसे निर्देश देने से इंकार कर दिया। क्योंकि ऐसे निर्देशों की पालना पर पर्यवेक्षण करना सम्भव नहीं है।

(5) अनिश्चित शर्तों की संविदायें - ऐसी संविदायें जिनकी शर्तों या तो निश्चित नहीं हों या जिनको सरलता से निश्चित नहीं किया जा सकता हो, का विशिष्ट प्रवर्तन नहीं कराया जाता क्योंकि ऐसे करार शून्य माने जाते हैं।

(6) अन्य संविदायें - ऐसी संविदायें विधिक तौर से मान्य नहीं हैं, अतः विशिष्ट पालन के योग्य नहीं होतीं।

उदाहरणार्थ, भारतीय न्यास अधिनियम की धारा 11(2) के अंतर्गत किसी न्यासधारी द्वारा अपनी शक्ति के बाहर या न्यास-भंग के लिए की गई संविदा का प्रवर्तन नहीं किया जा सकता।

(7) विवाचन की संविदायें - ऐसी संविदायें जिनके अंतर्गत किसी वर्तमान या भावी विवाद को पंच निर्णय के लिए सुपुर्द किये जाने का करार हो, का विशिष्ट अनुपालन नहीं कराया जा सकता, जहाँ तक कि विवाचन अधिनियम, 1940 में ऐसा उपबंधित नहीं हो।

(8) विकल्प पर प्रवर्तनीय संविदायें - ऐसी संविदायें जो किसी एक पक्षकार के विकल्प पर प्रवर्तनीय हों, का विशिष्ट अनुपालन नहीं करवाया जा सकता। यहाँ उल्लेखनीय है कि जहाँ वादी उस रीति से संविदा के अपने भाग का पालन नहीं करता है जो संविदा में विहित है तो यह माना जायेगा कि वादी संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तत्पर एवं इच्छुक नहीं रहा है और ऐसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए पक्षकार को बाध्य नहीं किया जायेगा।

न्यायालय का विवेकाधिकार

संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन की डिक्री पारित करता या न करता न्यायालय का विवेकाधिकार है। लेकिन न्यायालय से इस विवेकाधिकार के न्यायिक रीति से प्रयोग की अपेक्षा की जाती है। न्यायालय द्वारा मात्र इस आधार पर विनिर्दिष्ट अनुपालन की डिक्री से इंकार नहीं किया जाना चाहिये कि करार में सम्पत्ति का विनिर्दिष्टतया उल्लेख नहीं किया गया है। इसी प्रकार परिसीमा अधिनियम के अंतर्गत विस्तारित होने वाले विलम्ब मात्र के आधार पर विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री से इंकार किया जाना उचित नहीं है।

धारा 15 - विशिष्ट अनुपालन कौन प्राप्त कर सकते हैं।

जहाँ तक कि इस अध्याय में अस्वतंत्र उपबंधित नहीं किया गया हो, निम्नलिखित संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन करा सकते हैं -

(i) उसमें का कोई पक्षकार,

(ii) उसमें के किसी पक्षकार का हित प्रतिनिधि या मालिक, परन्तु जहाँ कि ऐसे पक्षकार की विद्वत्ता, कुशलता, शोधक्षमता या व्यक्तिगत गुण संविदा का सारवान् भाग है या जहाँ कि संविदा यह उपबंध करती है कि उसका हित अभिहस्तान्तरित नहीं किया जा सकता है, वहाँ उसका हित प्रतिनिधि या मालिक संविदा का विशिष्ट अनुपालन कराने के लिए अधिकृत नहीं होगा जब तक कि उसने अपने भाग का विशिष्ट अनुपालन पहिले ही नहीं कर दिया हो या उसके हित प्रतिनिधि अथवा मालिक द्वारा किया गया पालन अन्य पक्षकार द्वारा स्वीकृत नहीं कर दिया गया हो,

(iii) जहाँ कि संविदा विवाह पर व्यवस्थापन या एक ही परिवार के सदस्यों के मध्य संदेहास्पद अधिकारों के किसी समझौते की संविदा है वहाँ उसके अंतर्गत हित रखने का अधिकृत कोई व्यक्ति।

(iv) जहाँ कि संविदा किसी आजीवन आभोगी द्वारा अपनी शक्तियों के अंतर्गत की गई है, वहाँ कोई भी अवशिष्ट भोगी व्यक्ति।

(v) जहाँ कि करार आधिपत्य रखने वाले उत्तरभोगी के स्वत्व पूर्वाधिकारी के साथ की गई प्रसंविदा है और उत्तरभोगी ऐसी प्रसंविदा का लाभ प्राप्त करने के लिए अधिकृत है, वहाँ ऐसा उत्तरभोगी,

(vi) जहाँ कि करार ऐसी प्रसंविदा है और अवशिष्ट उत्तरभोगी उसका लाभ प्राप्त करने के लिए अधिकृत है और उसे भंग होने पर वास्तविक क्षति उठायेगा वहाँ ऐसा उत्तरभोगी,

(vii) जहाँ कि किसी कंपनी ने संविदा की है और बाद में वह अन्य कंपनी में मिल गया है तो ऐसे मिलने से उद्भूत नया कंपनी;

(viii) जहाँ कि कंपनी के प्रवर्तकों ने उसके निगमन के पूर्व कंपनी के प्रयोजनों के लिए कोई संविदा की हो और संविदा कंपनी के निगमन-निबन्धनों द्वारा समर्थित हो, तब कंपनी द्वारा;

लेकिन प्रतिबंध यह है कि कंपनी ने संविदा को स्वीकार कर लिया हो और संविदा के अन्य पक्षकार को अपनी स्वीकृति की सूचना दे दी हो।

इस धारा में उन व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है जो किसी संविदा का विशिष्ट अनुपालन करा सकते हैं। जहाँ एक से अधिक व्यक्तियों ने मिलकर कोई संविदा की है तो उस संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए सभी व्यक्तियों को सम्मिलित रूप से बाध संस्थित करना होगा। यदि उनमें से कुछ बाद में सम्मिलित नहीं होना चाहते हैं तो विशिष्ट अनुपालन का निर्देश नहीं दिया जायेगा।

पुष्पा बाई बनाम डॉ० विलियम्स के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा यह कहा गया है कि अचल सम्पत्ति के विक्रय के अनुबंध में जहाँ केवल विक्रेता के हस्ताक्षर हों और क्रेता के हस्ताक्षर नहीं हों तथा क्रेता स्वच्छ हाथों से न्यायालय में नहीं आया हो वहाँ वह संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन का हकदार नहीं होगा है।

धारा 16 - अनुतोष के लिए अपवर्जित व्यक्ति -

संविदा का विशिष्ट अनुपालन किसी ऐसे व्यक्ति के पक्ष में नहीं कराया जा सकता -

- (i) जो उसके भंग किये जाने पर प्रतिकर प्राप्त करने के लिए अधिकृत नहीं था, या
- (ii) जो पालन करने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसने संविदा के किसी आवश्यक अनुबंध का, जिसका उसकी ओर से पालन किया जाना अवशिष्ट है, अतिक्रमण किया है या जो संविदा के प्रति कपटपूर्ण कार्य करता है या जानबूझकर उस सम्बन्ध से भिन्न या उसके उन्मूलन के लिए कार्य करता है जिसका कि स्थापित किया जाना संविदा द्वारा अभिप्रेत है, या
- (iii) जो यह निश्चयपूर्वक कथन करने एवं सिद्ध करने में असफल हो जाता है कि वह संविदा की उन आवश्यक शर्तों का, प्रतिवादी द्वारा रोके गये या पालन करने के लिए सदैव तैयार एवं इच्छुक रहा है, जिसका कि उसके द्वारा पालन किया जाना है।

स्पष्टीकरण - खंड (iii) के लिए -

(क) जहाँ कि संविदा के अंतर्गत कोई धन दिया जाना है, वहाँ वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि प्रतिवादी को कोई धन दे या न्यायालय में धन जमा कराये, जब तक कि न्यायालय ने ऐसा कोई आदेश नहीं दिया हो।

(ख) वादी को संविदा के सही अर्थों के अनुसार पालन का या पालन करने की तत्परता एवं इच्छा का दृढ़तापूर्वक कथन करना होगा।

धारा 16 ऐसे व्यक्तियों का उल्लेख करती है जिनके पक्ष में संविदा के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन नहीं किया जा सकता। ये व्यक्ति निम्नलिखित हैं -

- (i) जो संविदा के भंग होने पर प्रतिकर प्राप्त करने के लिए अधिकृत नहीं हो।
- (ii) जो संविदा की किसी आवश्यक शर्त का पालन करने में असमर्थ हो गया हो।

जहाँ अचल सम्पत्ति के विक्रय की संविदा के मामले में प्रतिवादी हमेशा संविदा के अपने

भाग को पूरा करने के लिए तत्पर रहा हो लेकिन वादी अपने भाग को पूरा करने में असफल रहा हो वहाँ वादी संविदा के विशिष्ट अनुपालन की डिक्री प्राप्त करने का अधिकारी नहीं रह जाता। फिर भूमि के विक्रय की संविदा के विशिष्ट अनुपालन के वाद में वादी को यह साबित करना होता है कि वह संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए हर समय तत्पर रहा था और यदि वह ऐसा साबित करने में असफल रहता है तो उसके पक्ष में विशिष्ट अनुपालन की डिक्री पारित नहीं की जा सकती।

पाण्डुरंग गणपत तनवाड़े बनाम गणपत मेरू कदम का मामला- इसमें क्रेता संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए सदैव इच्छुक एवं तत्पर रहा था। उसने विक्रेता को विक्रय पत्र के निष्पादन हेतु नोटिस भी दिये, रजिस्ट्रीकरण के शुल्क व खर्चों का सदाय करने की इच्छा भी प्रकट की। न्यायालय ने इसे क्रेता की ओर से संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए इच्छुक एवं तत्पर रहना माना।

बलदेव सिंह बनाम छोटा सिंह का मामला इस मामले में वादी का यह अधिकथन था कि वह संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए सदैव इच्छुक एवं तत्पर रहा है। वह नियत तिथि को रजिस्ट्रार कार्यालय में गया, लेकिन विक्रेता वहाँ नहीं पहुँचा। न्यायालय ने इसे वादी के भाग पर तत्पर इच्छुक रहना माना।

मनोरम देवी बनाम गांगिया देवी का मामला इसमें क्रेता को संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए सदैव इच्छुक व तत्पर रहना माना गया, इसलिये कि -

- (i) उसे विक्रेता को संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए नोटिस दिये।
- (ii) वाद में इसका उल्लेख किया गया तथा
- (iii) साक्षियों के परीक्षण से इस तथ्य को साबित करवाया।

संविदा का पालन के लिए वाद की सुनवाई तक तत्पर रहना आवश्यक है। फिर ऐसी तत्परता का वाद में उल्लेख किया जाना भी अपेक्षित है। यदि वाद में ऐसा उल्लेख करना रह जाता है तो संशोधन द्वारा ऐसा किया जा सकता है।

यदि वादी की ओर से अनुपालन कर दी जाती है और अब उसके लिए कुछ भी करना शेष नहीं रह जाता है तो फिर उसकी ओर से तत्परता का प्रश्न ही नहीं उठता।

(iii) उसकी ओर से पालन नहीं की जाने वाली संविदा की किसी शर्त का अतिक्रमण करता हो।

- (iv) जो संविदा के सम्बन्ध में कपटपूर्वक कार्य करता है।
- (v) जो संविदा के उन्मूलन का प्रयास करता है।
- (vi) जो संविदा के पालन के लिये तत्पर एवं इच्छुक होना सिद्ध नहीं कर पाता।
- (vii) जिसमें यह जानते हुए संविदा की है कि सम्पत्ति में उसका कोई स्वत्व नहीं है।

(i) अ ने एक मकान को विक्रय करने का और एक निश्चित वार्षिक किराये पर विक्रय के दिनांक से 14 वर्ष की अवधि के लिए उस मकान को किराये पर लेने की संविदा की। अ दिवालिया हो जाता है और इस प्रकार संविदा के अपने भाग के प्रवर्तन नहीं करा सकता है।

(ii) अ ब के साथ एक संविदा के अंतर्गत पट्टे पर भूमि को धारण किये हुए है, वह उसे क्षतिग्रस्त करता है और उसके साथ बिना मालिक की भूमि का-सा व्यवहार करता है। अ संविदा के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन नहीं करा सकता।

(iii) अ एक ऐसी सम्पत्ति, जिसके बारे में वह जानता है कि वह ब की है स को विक्रय करने की संविदा करता है जिसके लिये कि वह प्राधिकृत नहीं है। अ संविदा के विशिष्ट अनुपालन कप प्रवर्तन नहीं करा सकता।

(iv) अ ब का एक मकान जिसमें उद्यान भी है, के विक्रय की संविदा करता है। अ ब की अनुमति के बिना कुछ अच्छे वृक्षों को नष्ट कर देता है एवं संविदा का अतिक्रमण करता है। अ संविदा के विशिष्ट अनुपालन का प्रवर्तन नहीं करा सकता।

एक मामले में पंजाब एंड हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि क्रेता के संविदा के अपने भाग के अनुपालन हेतु इच्छुक एवं तत्पर नहीं रहने का अभिवाक् केवल विक्रेता द्वारा ही किया जा सकता है, पश्चात्कर्ती क्रेता द्वारा नहीं है।

क्या समय संविदा का सार होता है - पी० पुरुषोत्तम रेड्डी बनाम मै० प्रताप स्टील्स लि० के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह सुस्थापित सिद्धांत है कि अचल सम्पत्ति के विक्रय के मामलों में समय संविदा का सार नहीं होता है। इस आशय की उपधारणा निहित रहती है। इसके बावजूद भी यदि समय संविदा का सार है तो न्यायालय द्वारा संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए युक्तियुक्त समय निर्धारित किया जा सकता है लेकिन शर्त यह है कि यह (i) संविदा की अभिव्यक्त शर्तों (ii) सम्पत्ति की प्रकृति तथा (iii) परवर्ती परिस्थितियों के अध्यधीन होगा।

विलम्ब का प्रभाव - यदि विनिर्दिष्ट अनुपालन का कोई वाद विलम्ब से संस्थित किया जाता है तो ऐसे विलम्ब की माफी के लिए विलम्ब के आधारों पर विचार करना होगा।

धारा 17 - ऐसे व्यक्ति द्वारा विक्रय या पट्टे की संविदा का प्रवर्तन नहीं किया जा सकता जिसका कि सम्पत्ति पर स्वत्व नहीं है।

(1) यदि वह उक्त अचल सम्पत्ति के विक्रय की या पट्टे पर देने की संविदा करता है,

(i) जिसके बारे में वह जानते हुए कि सम्पत्ति पर उसका स्वत्व नहीं है, उसे विक्रय या पट्टे पर देने की संविदा करता है।

(ii) जिसने यद्यपि उसने इस विश्वास के साथ संविदा की थी कि सम्पत्ति में उसका अच्छा स्वत्व है, उस समय पर जो विक्रय पट्टे की पूर्ति के लिए पक्षकारों द्वारा या न्यायालय द्वारा निर्धारित किया हो, क्रेता या पट्टेदाग्रीहीता की युक्तियुक्त संदेह से मुक्त स्वत्व प्रदान नहीं कर सकता।

(2) उपखंड (1) के प्रावधान जहाँ तक हो सके, चल सम्पत्ति के विक्रय या अवक्रय की संविदाओं पर भी लागू होंगे।

यह धारा उन व्यक्तियों को विक्रय या पट्टे की संविदा के प्रवर्तन से वर्जित करती है जो कि विक्रय या पट्टे की सम्पत्ति पर स्वत्व नहीं रखते हैं।

अ एक सम्पत्ति की यह जानते हुए कि वह ब की है, स को विक्रय करने की संविदा करता है। अ उसके विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार यदि पिता संयुक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति को जिसमें उसके पुत्रों का भी हित निहित है, विक्रय करने की संविदा करता है तो ऐसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन की डिक्री पारित नहीं की जा सकती।

धारा 18 - परिवर्तन के बिना संविदा का अप्रवर्तनीय होना - जहाँ कि वादी किसी लिपिबद्ध संविदा का विशिष्ट अनुपालन कराना चाहता है और प्रतिवादी उसमें परिवर्तन की याचना करता है वहाँ वादी निम्नलिखित अवस्थाओं में संविदा के परिवर्तन के बिना विशिष्ट अनुपालन नहीं करा सकता-

(i) जहाँ कि संविदा जिसका विशिष्ट अनुपालन चाहा गया है, कपट, मिथ्या व्यपदेशन या तथ्य की भूल के कारण ऐसी शर्तों या परिणामों में है जो कि पक्षकारों के आशय से भिन्न है अथवा उसमें वे सारी शर्तें निहित नहीं हैं जिनके बारे में पक्षकारों के बीच सहमति इस आधार पर हुई थी कि प्रतिवादी ने संविदा करते समय उसे संविदा समझा था।

(ii) जहाँ पक्षकारों का उद्देश्य कोई विधिक परिणाम उत्पन्न करना रहा हो जिसे कि संविदा जैसी कि वह निर्मित है, नहीं उत्पन्न कर सकती।

(iii) जहाँ कि पक्षकारों ने संविदा के निष्पादन के पश्चात् उसमें परिवर्तन कर दिया हो।

धारा 18 ऐसी संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन को अपवर्जित करती है जो कि पक्षकारों के आशय के अनुरूप नहीं है। सामान्यतः उन्हीं संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन कराया जाता है जो कि पक्षकारों के आशय का पूरा करती हो या कोई विधिक परिणाम उत्पन्न करती हो। ऐसी संविदाओं का विशिष्ट अनुपालन नहीं कराया जा सकता जो -

(i) कपट मिथ्या व्यपदेशन या तथ्य की भूल के कारण अधिकारों के आशय के अनुरूप नहीं रह गई है, या

(ii) जो पक्षकारों के आशय के अनुसार विधिक परिणाम उत्पन्न नहीं कर रही हो, या

(iii) जहाँ कि पक्षकारों ने संविदा निष्पादन के पश्चात् उसकी शर्तों में परिवर्तन कर दिया हो।

अ ब एवं स द के पक्ष में एक ऐसे लिखित पर हस्ताक्षर करते हैं जिसमें वे द के प्रति 1,000 रु० के बंधपत्र में प्रत्येक के साथ प्रवेश करते हैं। द अ ब एवं स के विरुद्ध प्रत्येक के प्रति 1,000 रु० तक उत्तरदायित्व के लिए वाद संस्थित करता है। अ ब एवं स यह सिद्ध करते हैं कि लिखत में प्रत्येक शब्द भूल से सम्मिलित हो गया है, उसका आशय सम्मिलित रूप से 1,000 रु० बंधपत्र निष्पादित करना था। अ उस संविदा का तब तक प्रवर्तन नहीं करा सकता जब तक कि उसमें 'प्रत्येक' शब्द को हटाकर परिवर्तन नहीं दिया जाता।

धारा 19 - पक्षकारों के विरुद्ध, उनके विधिक प्रतिनिधि या उनके हक को प्राप्त करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध अनुलोष।

धारा 19 उपबन्धित करता है कि विनिर्दिष्ट प्रवर्तन का अनुलोष निम्नलिखित व्यक्तियों के विरुद्ध प्राप्त किया जा सकता है।

1. संविदा के प्रत्येक पक्षकार के विरुद्ध।
2. किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जिसे संविदा के तत्पश्चात् हक प्राप्त हुआ है परन्तु ऐसे अन्तरणी को छोड़कर जिसमें सम्पत्ति में सद्भावपूर्वक और बिना जानकारी के हक प्राप्त किया है।
3. किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जो सम्पत्ति के स्वामित्व का दावा किसी पूर्व हक प्राप्त होने की बात करता है और जिसकी वादी को जानकारी थी किन्तु तब नहीं जब हक ऐसा हो कि प्रतिवादी उसे समाप्त कर सकता था।
4. किसी ऐसे कंपनी के विरुद्ध जो अन्तरणकर्ता कंपनी के विलयन से सृजित हुई है।
5. एक ऐसी कंपनी के विरुद्ध जिसके निगमन के पूर्व ही उसके प्रवर्तकों ने कंपनी के प्रयोजनों के लिए कोई संविदा की थी किन्तु शर्त यह है कि ऐसी संविदा कंपनी के निगमन दस्तावेजों से मेल खाती है।

धारा 20 - विशिष्ट अनुतोष की आज्ञा अमुदत्त करने में न्यायालय का विवेक -

(1) विशिष्ट अनुतोष की आज्ञा अमुदत्त करने का क्षेत्राधिकार विवेकाधीन है और न्यायालय सिर्फ इसलिए कि ऐसा करना विधिपूर्ण है, ऐसा अनुतोष अमुदत्त करने के लिये बाध्य नहीं है परन्तु न्यायालय का विवेकाधिकार स्वेच्छाचारपूर्ण नहीं है, वरन् वह सुस्थित, युक्तियुक्त एवं न्यायिक सिद्धांतों द्वारा निर्देशित तथा अपील के न्यायालय द्वारा परिशोधनीय है।

(2) निम्नलिखित मामलों में न्यायालय विशिष्ट अनुतोष की आज्ञा अमुदत्त नहीं करने के अपने विवेकाधिकार का उचित प्रयोग कर सकेगा -

(i) जहाँ कि संविदा की शर्तें या संविदा करते समय पक्षकारों का आचरण अथवा अन्य परिस्थितियाँ जिनके अंतर्गत संविदा की गई है, ऐसी हैं कि वे वादी को प्रतिवादी पर अनुचित लाभ प्रदान करती हो, चाहे वह शून्यकरणीय नहीं हो, या

(ii) जहाँ कि संविदा के पालन किये जाने से प्रतिवादी को कुछ ऐसी कठिनाइयाँ हो जायेंगी जिसकी कि वह पूर्वानुमान नहीं कर सकता था एवं जिसके पालन नहीं किये जाने से वादी को कोई कठिनाई नहीं होगी, या

(iii) जहाँ कि प्रतिवादी ऐसी परिस्थितियों में संविदा करता है जो कि यद्यपि उसे शून्यकरणीय नहीं बनाती है, लेकिन यदि उसका विशिष्ट अनुपालन किया गया तो वह असाम्यिक होगा।

स्पष्टीकरण

— (1) प्रतिकर की अपर्याप्तता अथवा यह तथ्य मात्र कि संविदा प्रतिवादी के लिये कष्टदायक है या प्रकृति से अमितक्षयी है, धारा 20 के खंड (i) के अर्थ में अनुचित लाभ या खंड (ii) के अर्थ में कठिनाई, संघटित करने वाली नहीं समझी जायेगी।

(2) यह प्रश्न कि क्या संविदा का पालन खंड (ii) के अर्थ में प्रतिवादी के लिए कठिनाई उत्पन्न करेगा, उन मामलों को छोड़कर जहाँ कि कठिनाई संविदा के उपरान्त वादी के किसी कार्य के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई है, उन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर निर्णीत किया जायेंगा, जो संविदा किये जाने के समय अस्तित्व में थी।

(3) न्यायालय ऐसे किसी मामले में विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा अमुदत्त करने में अपने विवेकाधिकार का उचित प्रयोग कर सकेगा जहाँ कि वादी ने विशिष्ट अनुपालन की जा सकने वाली एक संविदा के परिणाम में सार्वान् कार्य किया है या हानियाँ वहन की हैं। न्यायालय किसी पक्षकार को एक संविदा के विशिष्ट अनुपालन से मात्र इस आधार पर इंकार नहीं करेगा कि अन्य पक्षकार के कथनानुसार संविदा प्रवर्तन योग्य नहीं है।

धारा 20 विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा अमुदत्त करने में न्यायालय के विवेकाधिकार का उल्लेख करती है। कोई भी व्यक्ति अधिकार के रूप में विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा की माँग नहीं कर सकता। यह पूर्णतया न्यायालय के विवेक पर निर्भर है कि वह ऐसी आज्ञा अमुदत्त करे या नहीं करे, पर न्यायालय की यह शक्ति स्वेच्छाचारपूर्ण नहीं है। उस पर भी कुछ मर्यादाओं आरोपित की गई हैं।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने एक मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि अचल सम्पत्ति का विक्रय के मामले में विशिष्ट अनुपालन की डिक्री पारित करना या नहीं करना न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है। लेकिन न्यायालय को अपने विवेक का प्रयोग न्यायिक तौर पर करना चाहिये। परिसीमा की समयावधि तक विस्तारित होने वाले विलम्ब मात्र के आधार पर विशिष्ट अनुपालन की डिक्री अमुदत्त करने से इंकार नहीं किया जा सकता।

इसी प्रकार न्यायालय द्वारा मात्र इस आधार पर विनिर्दिष्ट अनुपालन की डिक्री से इंकार नहीं किया जाना चाहिए कि करार में सम्पत्ति का विनिर्दिष्टतया विवरण नहीं दिया गया है। लेकिन जहाँ क्रेता ने ढाई वर्ष तक संविदा के अपने भाग का पालन करने का प्रयास नहीं किया हो, वहाँ उसके पक्ष में विनिर्दिष्ट अनुपालन की डिक्री से इंकार किया जा सकता है। चाहे ऐसे मामलों में समय संविदा का सार न रहा हो।

परिस्थितियाँ, जिनमें न्यायालय विशिष्ट अनुपालन का अनुतोष अनुदत्त नहीं करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकेगा-निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय विशिष्ट अनुपालन का अनुतोष अनुदत्त करने से इंकार करने में विवेकाधिकार का उचित एवं युक्तियुक्त प्रयोग कर सकेगा-

(1) जहाँ संविदा ऐसी परिस्थितियों में निर्मित की गई जो वादी को प्रतिवादी पर अनुचित लाभ प्रदान करती हो। अनुचित लाभ के मामलों में वादी के व्यवहार पर मुख्य रूप से ध्यान दिया जायेगा ऐसी संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन के इंकार किया जा सकेगा जो कि अनुचित साधनों द्वारा निर्मित की गई हो।

(2) जहाँ संविदा ऐसी हो कि यदि उसका विशिष्ट अनुपालन कराया गया तो वह प्रतिवादी को कठिनाई में डाल देगा एवं यदि उसका अनुपालन नहीं किया गया तो वादी को कोई कठिनाई नहीं होगी। लेकिन जहाँ कठिनाई स्वयं प्रतिवादी के व्यवहार से उत्पन्न होती है, वहाँ विशिष्ट अनुपालन से इंकार नहीं किया जायेगा।

(3) जहाँ संविदा ऐसी हो जो यद्यपि शून्यकरणीय नहीं है, पर यदि उसका विशिष्ट अनुपालन कराया गया तो वह असाध्यिक होगा।

पी० रत्नास्वामी बनाम ए० राजा के इस मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि वादी साक्ष्य में वाद में अंकित तथ्यों से भिन्न किसी नये करार को स्थापित करने का प्रयास करता है तो उसके चाद को खारिज किया जा सकता है।

महारानी शांति देवी पी० गायकवाड़ बनाम सबजी भाई हरि भाई पटेल का मामला इस मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह कहा गया है कि विनिर्दिष्ट अनुतोष का अनुदत्त किया जाना न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति के अंतर्गत है। इससे इंकार किया जा सकता है यदि इसका प्रवर्तन असाध्यिक प्रतीत होता हो। ऐसे मामलों में पक्षकार की ख्याति और प्रतिष्ठा कोई अर्थ नहीं रखती।

परिस्थितियाँ, जिनमें न्यायालय विशिष्ट अनुपालन का अनुतोष अनुदत्त करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकेगा - अधिनियम की धारा 20 के खंड 3 एवं 4 में उन परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है जिनके अंतर्गत न्यायालय विशिष्ट अनुतोष अनुदत्त करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकेगा -

(1) जहाँ वादी ने ऐसी किसी संविदा के परिणाम में कोई सारवान् कार्य कर लिया है या हानियाँ वहन की हैं, जिसका कि विशिष्ट अनुपालन किया जा सकता है।

(2) न्यायालय किसी पक्षकार को मात्र इस आधार पर संविदा के विशिष्ट अनुपालन से इंकार नहीं करेगा कि दूसरे पक्षकार के कथन पर प्रवर्तन योग्य नहीं हैं।

यह नियम पारस्परिकता के सिद्धांत पर आधारित है, पारस्परिकता के सिद्धांत से अभिप्राय यह है कि संविदा का प्रवर्तन दोनों ही पक्षकारों द्वारा किया जाना चाहिए। इसका स्पष्ट आशय यह हुआ कि संविदा के पक्षकार को उसके प्रवर्तन की स्वतंत्रता होनी चाहिए। एक मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय द्वारा ऐसे मामलों में विनिर्दिष्ट अनुपालन का अनुतोष अनुदत्त किया जा सकता है, जहाँ-

- (i) वादी सदैव अपने भाग का पालन करने के लिए पूर्णतया तत्पर एवं इच्छुक रहा हो,
- (ii) उसके द्वारा प्रतिवादी को उसके भाग के पालन से कभी निवारित नहीं किया गया हो,
- (iii) वादी की दुर्भावना नहीं हो, तथा

(iv) प्रतिवादी अपने प्रति होने वाली असुविधा अथवा कष्ट को साबित नहीं कर पाया हो।

तुलनात्मक कठिनाई - विनिर्दिष्ट अनुपालन का अनुतोष चूंकि न्यायालय के विवेकाधिकार का विषय है, अतः ऐसे मामलों में पक्षकारों की तुलनात्मक कठिनाई के बिन्दु पर विचार किया जाना चाहिए।

समय का सारभूत होना - अचल सम्पत्ति के संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के मामलों में यद्यपि समय, संविदा का सार ही होता है फिर भी न्यायालय द्वारा मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के अनुसार अनुपालन के लिए युक्तियुक्त समय सुनिश्चित किया जा सकता है।

अरजिस्ट्रीकृत करार का प्रभाव - एक मामले में उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अरजिस्ट्रीकृत अनुबंध के आधार पर भी संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन का वाद लाया जा सकता है।

अपीलीय न्यायालय द्वारा परिशोधन - जैसे कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि न्यायालय की विवेकाधीन शक्तियाँ स्वेच्छाचारपूर्ण या निरक्षुश नहीं हैं। न्यायालय की इन विवेकाधीन शक्तियों के आधार पर अनुदत्त अनुतोष के विरुद्ध अपील की जा सकती है एवं अपीलीय न्यायालय उसमें परिशोधन कर सकता है। लेकिन अपीलीय न्यायालय परीक्षण न्यायालय की विवेकाधीन शक्तियों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि परीक्षण न्यायालय ने अपनी विवेकाधीन शक्तियों का स्वेच्छाचारपूर्ण तरीके से या न्यायिक सिद्धांतों के विरुद्ध प्रयोग नहीं किया हो।

धारा 21 - कुछ मामलों में प्रतिकर देने की शक्ति -

(1) संविदा के विशिष्ट अनुपालन के वाद में, वादी उसके भंग के लिए या तो विशिष्ट अनुपालन के साथ या के स्थान पर प्रतिकर का दावा कर सकता है।

(2) ऐसे वादों में जहाँ न्यायालय यह विनिश्चय करता है कि विशिष्ट अनुपालन अनुदत्त नहीं किया जा सकता, लेकिन पक्षकारों के बीच कोई संविदा वर्तमान है एवं प्रतिवादी ने उसको तोड़ा है और वादी को ऐसे भंग के लिए प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार है तो न्यायालय तदनुसार प्रतिकर का आदेश दे सकेगा।

(3) यदि ऐसे वादों में न्यायालय यह विनिश्चय करता है कि विशिष्ट अनुपालन अनुदत्त किया जा सकता है लेकिन वह मामले के न्यायनिर्णयन के लिए संतोषप्रद नहीं होगा एवं संविदा के भंग के लिए वादी को कुछ प्रतिकर भी दिया जाना चाहिए तो न्यायालय तदनुसार ऐसे प्रतिकर का आदेश देगा।

(4) इस धारा के अंतर्गत प्रतिकर का निर्धारण करने में न्यायालय भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 73 में उल्लिखित सिद्धांतों से दिग्दर्शित होगा।

(5) इस धारा के अंतर्गत प्रतिकर प्रदान नहीं किया जायेगा, यदि वादी ने वाद में ऐसी माँग नहीं की हो।

लेकिन, यदि वादी ने वाद-पत्र में ऐसे प्रतिकर की माँग नहीं की है, तो भी न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम पर वादी को उसमें संशोधन द्वारा ऐसे अनुतोष को सम्मिलित करने की अनुमति दे सकेगा।

स्पष्टीकरण - ऐसी परिस्थितियाँ, जिनमें कि संविदा विशिष्ट अनुपालन के अयोग्य है न्यायालय को इस धारा के अंतर्गत प्रदत्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से वर्जित नहीं करेगी।

यह धारा वादी को प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार प्रदत्त करती है। धारा में प्रतिकर के सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्था की गई है

(1) वादी विशिष्ट अनुपालन के साथ या बदले में प्रतिकर की माँग कर सकता है लेकिन जहाँ संविदा का विशिष्ट अनुपालन असम्भव हो, वहाँ प्रतिकर अनुदत्त किया जा सकेगा।

(2) ऐसी अवस्था में जबकि विशिष्ट अनुपालन अनुदत्त नहीं किया जा सकता, वादी प्रतिकर प्राप्त कर सकता है, बशर्ते की प्रतिवादी ने किसी वर्तमान संविदा का भंग किया हो।

(3) जहाँ संविदा का विशिष्ट अनुपालन अनुदत्त किया जा सकता हो, लेकिन वह मामले के न्यायनिर्णयन के लिये संतोषप्रद नहीं होगा तो वादी को प्रतिकर के लिए आदेश दिया जा सकेगा।

(4) प्रतिकर प्राप्त करने के लिये वादी को वाद-पत्र में ऐसी माँग करना आवश्यक है, अन्यथा न्यायालय प्रतिकर का आदेश नहीं देगा।

(5) यदि वादी द्वारा वाद-पत्र में माँग नहीं की गई है तो भी न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम पर उसमें संशोधन द्वारा प्रतिकर की माँग को सम्मिलित करने की अनुमति दे सकेगा।

(6) इस धारा के अंतर्गत प्रतिकर का निर्धारण करते समय न्यायालय भारतीय संविदा अधिनियम 1872 की धारा 73 से दिग्दर्शित होगा।

लेकिन जहाँ सम्पत्ति के देवोत्तर सम्पत्ति होने के कारण प्रतिवादी उसके विक्रय की संविदा का अनुपालन नहीं कर पाया हो वहाँ वादी न तो ऐसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन का दावा कर सकता है। और न ही प्रतिकर अथवा क्षतिपूर्ति का ही।

धारा-22 विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 में यह धारा नवीन है। यह धारा विशिष्ट अनुपालन के वाद के साथ-साथ निम्नलिखित अन्य अनुतोष भी प्राप्त करने का अधिकार देती है। विशिष्ट अनुतोष

अधिनियम, 1963 में एक नयी व्यवस्था है। यह धारा विशिष्ट अनुपालन के वाद के साथ-साथ निम्नलिखित अन्य अनुतोष भी प्राप्त करने का अधिकार अधिकार देती है -

(i) आधिपत्य या विभाजन और पृथक आधिपत्य प्राप्त करने का, एवं

(ii) अग्रिम की राशि की वापसी का।

सामान्यतः यह माँग वाद-पत्र में विशिष्ट अनुपालन के साथ-साथ की जानी चाहिये, पर यदि ऐसी माँग नहीं की गई है तो भी न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम पर संशोधन द्वारा उसमें यह माँग सम्मिलित की अनुमति करने दे सकेगा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सम्पत्ति के विभाजन के सम्बन्ध में कोई भी संशोधन इस धारा के अंतर्गत प्रस्तुत वाद में ही अनुदत्त किया जा सकता है। अग्रिम राशि की वापसी का आदेश अपील में अपीलीय न्यायालय द्वारा भी दिया जा सकता है। इस धारा का एकमात्र उद्देश्य अलग-अलग माँग द्वारा न्यायिक कार्यवाहियों की बहुलता को रोकना है। यह धारा अभिव्यचन का एक नियम प्रस्तुत करती है। जहाँ तक अग्रिम राशि की वापसी का प्रश्न है न्यायालय वादी को ऐसी राशि वापस दिला सकता है चाहे उसने वाद में ऐसा अनुतोष चाहा ही न हो। सामान्यतः ऐसा वहाँ होता है जहाँ कोई संविदा प्रतिवादी की वांछ पर विखंडित कर दी जाये और उस संविदा के अंतर्गत वादी प्रतिवादी को कोई अग्रिम राशि संदत्त कर रखी है।

धारा 23 - क्षतिपूर्ति का परिनिर्धारण विशिष्ट अनुपालन में बाधक नहीं है -

यह धारा निरस्त अधिनियम की धारा 20 की अनुपूरक है। इस धारा का एकमात्र उद्देश्य यह है कि संविदा का विशिष्ट अनुपालन क्षतिपूर्ति के परिनिर्धारण से अवरोधित नहीं होगा।

धारा 24 - विशिष्ट अनुपालन के वाद के निरस्त हो जाने के पश्चात् भंग के लिए क्षतिपूर्ति के वाद का अपवर्जन।

यह धारा, वादी के प्रतिकर के अधिकारों को समाप्त करने का प्रावधान करती है जबकि उसका विशिष्ट अनुपालन का वाद निरस्त हो गया हो। लेकिन वह संविदा-भंग की अवस्था में अन्य अनुतोष की माँग करने से वंचित नहीं किया जायेगा, जिसके लिये कि वह अधिकृत हो।

अध्याय - 5 विलेखों का परिशोधन

सामान्यतः न्यायालय विलेखों को प्रभावशील बनाने के पक्ष में रहते हैं। किसी साधारण भूल या त्रुटि मात्र से वह उन्हें निरस्त नहीं कर देते। यद्यपि विलेखों का निष्पादन अत्यन्त सतर्कता से किया जाता है, फिर भी कभी-कभी उनमें भूल या त्रुटि रह सकती है। ऐसी भूल या त्रुटि संयोगवश या जानबूझ कर की जा सकती है। ऐसी भूलों का प्रभाव यह होता है कि वह विलेख के पक्षकारों के आशय को स्पष्ट नहीं कर पाती। यदि न्यायालय ऐसे विलेखों को अक्षरशः अर्थ प्रदान कर दें तो पक्षकारों के साथ अन्याय होने की सम्भावना रहती है। अतः न्यायालय हमेशा ही ऐसी भूल या त्रुटि को सुधारने के पक्ष में रहता है, ताकि पक्षकारों के आशय के अनुरूप उसे अर्थ दिया जा सके। इसी उद्देश्य से विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 26 में विलेखों के परिशोधन के बारे में प्रावधान किया गया है।

धारा 26 विलेखों का परिशोधन कब किया जा सकेगा ?-

(1) जब कि पक्षकारों की पारस्परिक भूल या कपट से कोई संविदा या अन्य लिखित विलेख (जो कंपनी-अधिनियम, 1956 के अंतर्गत कंपनी की नियमावली नहीं है) उनके वास्तविक आशय को प्रकट नहीं करता है, तो

- (i) उसमें का कोई भी पक्षकार या उसका प्रतिनिधि उस विलेख में परिशोधन के लिये न्यायालय में वाद संस्थित कर सकेगा, या
- (ii) वादी, ऐसे किसी वाद में, जिसमें विलेख के अंतर्गत कोई अधिकार विवाद-ग्रस्त है, अपने अभिवचन में उसके परिशोधन की माँग कर सकता है, या
- (iii) उपर्युक्त वर्णित खंड (ii) में वर्णित वाद की अवस्था में प्रतिवादी अपनी अन्य प्रतिरक्षा के अतिरिक्त, विलेख में परिशोधन की माँग कर सकता है।

(2) जब न्यायालय में खंड (1) में वर्णित सति से विलेख में परिशोधन करने हेतु वाद संस्थित किया गया है एवं न्यायालय यह पता है कि पक्षकारों की किसी पारस्परिक भूल या कपट के कारण वह विलेख उनके वास्तविक आशय को प्रकट नहीं कर पा रहा है, तो वह अपने विवेकानुसार किसी तीसरे पक्षकार द्वारा सम्भावनापूर्ण अर्जित हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना उस विलेख में परिशोधन करने का आदेश दे सकेगा।

(3) प्रथमतः लिखित संविदा का परिशोधन किया जायेगा एवं परिशोधन के बाद यदि पक्षकार उसके विशिष्ट पालन की माँग करे, और न्यायालय यदि ऐसा उचित समझे तो विशिष्ट पालन का आदेश किया जा सकेगा।

(4) विलेख में परिशोधन करने की अनुमति या आज्ञा तब तक नहीं दी जायेगी, जब तक कि कोई पक्षकार विशिष्ट रूप से ऐसी माँग नहीं करे। लेकिन यदि किसी पक्षकार ने अभिवचन में ऐसे अनुतोष की माँग नहीं की है तो भी न्यायालय इस वाद के किसी भी प्रक्रम पर उसमें संशोधन करने एवं ऐसे अनुतोष को सम्मिलित करने की अनुमति दे सकेगा।

अ अपना एक मकान तथा तीन गोदामों में से एक गोदाम को ब को विक्रय करने के आशय से ब द्वारा लिखित हस्तांतरण पत्र का निष्पादन करता है। लेकिन हस्तांतरण-पत्र में ब ने कपट द्वारा तीनों गोदामों को सम्मिलित कर दिया था। उन दो गोदामों में से ब एक गोदाम स को एवं एक गोदाम द को किराये पर दे देता है। द को ब द्वारा किये गये कपट की जानकारी नहीं है। जहाँ तक ब एवं स का प्रश्न है, उसे ऐसा परिशोधित किया जा सकता कि स को हस्तांतरित गोदाम

उसमें से अपवर्जित कर दिया जाय, लेकिन उसमें ऐसा परिशोधन नहीं किया जा सकेगा जिससे कि द के पट्टे पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

धारा 26 विलेखों के परिशोधन के बारे में संव्यवहार करती है। परिशोधन का शाब्दिक अर्थ सुधार करना या शुद्ध कराना है। विशिष्ट अनुतोष अधिनियम के अंतर्गत परिशोधन का अर्थ किसी विलेख में की ऐसी त्रुटि या भूल को सुधारना है जो कि पक्षकारों की पारस्परिक भूल या कपट से हो गई है एवं जिससे विलेख का आशय प्रकट नहीं हो रहा है। इस तरह धारा 26 पक्षकारों के हित में निर्मित की गई है, एवं इसका उद्देश्य विलेख में परिशोधन कर ऐसे अन्याय को रोकना है, जो कि यदि परिशोधन नहीं किया जाता तो सम्भव होता। यह धारा विलेखों में अन्य कोई परिवर्तन करने की अनुमति नहीं देती। जहाँ भूमि के विक्रय के कस्त्र में क्षेत्र के सम्बन्ध में तय की गई शर्तों में कोई संदिग्धता रह गई हो, वहाँ उसमें परिशोधन किया जा सकता है। परिशोधन के लिये आवश्यक शर्तें

धारा 26 के अंतर्गत विलेखों में परिशोधन के लिए कुछ आवश्यक शर्तें निर्मित की गई है, जिनकी पूर्ति किया जाना अपेक्षित हैं। यह शर्तें निम्नलिखित हैं -

(1) अनुबंध का होना - किसी विलेख में परिशोधन की माँग किये जाने के पूर्व यह आवश्यक है कि पक्षकारों के मध्य कोई अनुबंध पूर्ण हो गया हो। ऐसे अनुबंध की शर्तें मौखिक या लिखित किसी भी रूप में पक्षकारों के आशय को प्रकट करने वाली होनी चाहिये एवं विलेख में उनका लिपिबद्ध भी कर दिया जाना आवश्यक है।

(2) कपट या पारस्परिक भूल - पक्षकारों को ऐसी भूल या कपट को सिद्ध करना होगा। ऐसी भूल का पारस्परिक होना भी आवश्यक है। एक पक्षकार की भूल परिशोधन का आधार नहीं बन सकती। ऐसी भूल या कपट को मौखिक साक्ष्य द्वारा भी सिद्ध किया जा सकता है।

(3) आशय का स्पष्ट नहीं हो पाना - विलेख में प्रयुक्त भूल या कपट ऐसा होना चाहिये जिससे कि विलेख का आशय स्पष्ट नहीं हो पा रहा हो।

(4) परिशोधन के अभाव से अन्याय होने की सम्भावना - विलेख में कोई ऐसी भूल, त्रुटि या कपट का होना आवश्यक है जिसका यदि परिशोधन नहीं किया गया तो किसी पक्षकार के साथ अन्याय होने की सम्भावना है। यदि भूल या कपट ऐसा है जिससे पक्षकारों पर किसी प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता हो, तो परिशोधन की आवश्यकता नहीं रहती है।

(5) परिशोधन की माँग किया जाना - विलेखों में परिशोधन तब तक नहीं किया जा सकता, जब तक कि पक्षकारों द्वारा ऐसे परिशोधन की माँग नहीं की गई हो। ऐसे परिशोधन की माँग वाद के किसी भी प्रक्रम में की जा सकती है, एवं न्यायालय ऐसी माँग किये जाने पर वाद पत्र में संशोधन एवं परिशोधन के अनुतोष को सम्मिलित करने की अनुमति दे देगा।

(6) तीसरे पक्षकार पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं होना चाहिये - यदि किसी विलेख के अंतर्गत किसी तीसरे व्यक्ति ने सद्भावनापूर्ण कोई हित अर्जित कर लिये हों तो उनके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला कोई परिशोधन नहीं किया जा सकता।

अवधि सीमा

किसी विलेख में भूल या कपट का पता लगाने के बारे में कोई अवधि-सीमा निर्धारित नहीं की गई है। जब कभी भी पक्षकारों की जानकारी में ऐसी भूल या कपट आये तो वह न्यायालय में परिशोधन के लिये वाद संस्थित कर सकेंगे।

अध्याय - 6 संविदाओं का विखंडन

संविदाओं का विखंडन, संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन के ठीक विपरीत उपचार है। सामान्यतः पक्षकार संविदाओं के विशिष्ट अनुपालन के लिए उद्यत रहते हैं। लेकिन कभी-कभी पक्षकार उसका विशिष्ट अनुपालन नहीं कर उसे विखंडित करने का अनुतोष चाहते हैं। साधारणतया ऐसा उस समय होता है जबकि कोई संविदा कपट, मिथ्या-व्यवदेशन, दबाव, अनुचित प्रभाव या भूल के अंतर्गत की जाती है, और उसका परिणाम किसी पक्षकार को भारी क्षति उठाना होता है। ऐसी स्थिति में न्यायालय यदि उसे विखंडित नहीं करता है तो पक्षकार के साथ अन्याय होने की सम्भावना रहती है। अतः ऐसे पक्षकार को क्षति से बचाने के उद्देश्य से विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 27 से 30 तक में संविदाओं के विखंडन का प्रावधान किया गया है।

धारा 27 विखंडन कब स्वीकार या अस्वीकार किया जा सकता है?

(1) किसी संविदा में हित रखने वाला कोई व्यक्ति उसे विखंडित करने के लिये बाद-स्थित कर सकेगा और न्यायालय निम्नलिखित अवस्थाओं में विखंडन की स्वीकृत, अनुमति या न्यायनिर्णीत कर सकेगा -

- (i) जब कोई संविदा वादी द्वारा शून्यकरणीय या निरस्त करने योग्य हो।
- (ii) जहाँ संविदा प्रत्यक्षतः प्रतीत नहीं होने वाले कारणों से अवैध हो एवं जिसके लिये प्रतिवादी वादी से अधिक दोषी हो।

(2) उपखंड (1) में किसी बात के होते हुए भी न्यायालय निम्नलिखित आधारों पर विखंडन से इंकार कर सकेगा -

- (i) जहाँ वादी ने सुव्यक्त या उपलक्षित रूप से संविदा का अनुसमर्थन कर दिया हो।
- (ii) जहाँ संविदा किये जाने के समय से परिस्थितियों में ऐसा परिवर्तन हो गया हो (लेकिन ऐसा परिवर्तन स्वयं प्रतिवादी के किसी कार्य द्वारा नहीं हुआ हो) कि पक्षकारों को ऐसी स्थिति में प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता जो कि संविदा के समय थी।
- (iii) जहाँ किसी तीसरे व्यक्ति ने संविदा के अस्तित्व में रहते, सद्भावनापूर्वक एवं प्रतिफल देकर उसमें कोई अधिकार अर्जित कर लिये हों।
- (iv) जहाँ संविदा के किसी ऐसे भाग की विखंडित किया जाना हो, जो शेष संविदा से पृथक नहीं किया जा सकता हो।

यह किसी पक्षकार को संविदा के विखंडन का अधिकार देती है। विखंडन का आशय किसी संविदा को समाप्त करना, निरस्त करना या आरम्भ से ही शून्य घोषित करना है। बैनर्जी का टैगोर लॉ लेक्चर्स में कथन था कि विशिष्ट अनुपालन की यह एक उपजाति विशिष्ट अनुपालन के ठीक विपरीत है, एक पक्षकार को बाध्यकारी संविदा के पालन के प्रवर्तन द्वारा अनुतोष प्रदान करता है, जबकि दूसरा यदि उसे बद्ध करता न्यायोचित नहीं हो तो उसे उन्मुक्ति प्रदान करके उपचार प्रदान करता है।

विखंडन की आवश्यक शर्तें

संविदा के विखंडन का अनुतोष प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित शर्तों का पूरा किया जाना आवश्यक है -

(1) संविदा में हित रखने वाला व्यक्ति - विखंडन के लिए अनुतोष की माँग वही व्यक्ति कर सकता है जो कि उस संविदा में कोई हित रखता हो। चाहे वह संविदा का पक्षकार हो या नहीं।

(2) संविदा का शून्यकरणीय होना - विखंडन के लिए संविदा का शून्यकरणीय होना

आवश्यक है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 13 से 19 के अंतर्गत कोई संविदा शून्यकरणीय होती है। यदि यह कपट, मिथ्या व्यपदेशन, दबाव, अनुचित प्रभाव या उत्पीड़न के द्वारा की गई हो।

अ एक खेत ब को विक्रय करता है। खेत पर से एक मार्गाधिकार है जिसकी अ को व्यक्तिगत रूप से जानकारी है, पर वह उसे ब से छिपाता है। ब को उस संविदा को विखंडित करने का अधिकार है। यदि कोई व्यक्ति अपने-आपको सम्पत्ति का सद्भावी क्रेता बताता है तो इस तथ्य को साबित करने का भार उसी पर होगा।

(3) संविदा का अवैध होना - संविदा के अवैध होने के आधार पर भी उसके विखंडन की माँग की जा सकती है। संविदा ऐसे कारणों से अवैध हो सकती है, जो कि प्रत्यक्षतः प्रतीत नहीं होते हों एवं अवैधता के संदर्भ में प्रतिवादी वादी से अधिक दोषी हो।

अ एक एटार्नी अपनी वादार्थी ब को जो कि एक हिन्दू विधवा है, उसकी साख को हथिया लेने के आशय से, सम्पत्ति को उसे हस्तान्तरित करने के लिए उद्योतित करता है। हस्तांतरण का कारण वह ऋणदाताओं के साथ कपट करना बताता है। यहाँ दोनों पक्षकार समान रूप से दोषी नहीं, अतः ब को हस्तांतरण विलेख को विखंडित करने का अधिकार है।

धारा 28 किसी अचल सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे की संविदाओं की अवस्था में विखंडन जहाँ उसके विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा पारित हो गई हो-

(1) जहाँ न्यायालय ने किसी वाद में किसी अचल सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे की संविदा के विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा पारित कर दी है और न्यायालय द्वारा आज्ञा में निर्दिष्ट दिनांक तक कोई क्रय राशि या अन्य कोई राशि जिसके भुगतान करने का आज्ञा में आदेश दिया गया है, क्रेता या पट्टाग्रहीता भुगतान नहीं करता है तो ऐसी अचल सम्पत्ति के विक्रेता या पट्टाकर्ता को उसी वाद में एक प्रार्थनापत्र द्वारा उस संविदा को विखंडित कराने का अधिकार होगा और न्यायालय ऐसे प्रार्थनापत्र पर किसी पक्षकार की चूक के आधार पर या जहाँ तक कि दोनों के साथ सम्बन्धित हैं, जैसे भी स्थिति हो और न्याय कि लिये अपेक्षित हो, संविदा विखंडित कर सकेगा।

आनन्दीलाल बनाम गुनन्द का वाद उक्त के परिप्रेक्ष्य में द्रष्टव्य है।

(2) जहाँ उपखंड (1) के अंतर्गत कोई संविदा विखंडित कर दी गई है, तो न्यायालय -

(i) क्रेता या पट्टाग्रहीता को यह निर्देश देगा कि यदि उसने संविदा के अंतर्गत अचल सम्पत्ति का आधिपत्य प्राप्त कर लिया है तो वह पुनः क्रेता या पट्टाकर्ता को सौंप दे।

(ii) यह निर्देश दे सकेगा कि विक्रेता या पट्टाकर्ता को वह सारे लाभ एवं किराया जो कि क्रेता या पट्टाग्रहीता ने ऐसी सम्पत्ति के आधिपत्य प्राप्त करने के बाद अर्जित किया है, लौटा दे एवं यदि मामले में न्याय के लिये अपेक्षित हो तो विक्रेता या पट्टाकर्ता को भी उस सारी रकम के भुगतान का निर्देश दे सकेगा जो कि उस संविदा के अंतर्गत उसने क्रेता या पट्टाग्रहीता से प्राप्त की है।

(3) यदि उपखंड (1) के अंतर्गत पारित आज्ञा के पालन में क्रेता या पट्टाग्रहीता निर्दिष्ट राशि का भुगतान कर देता है तो न्यायालय उसी वाद में उसे अन्य अनुतोष अनुदत्त कर सकेगा जिसमें निम्नलिखित में से कोई या सभी अनुतोष सम्मिलित होंगे -

(i) विक्रेता या पट्टाकर्ता द्वारा एक समुचित अभिहस्तान्तरण या पट्टे का निष्पादन।

(ii) ऐसे अभिहस्तान्तरण या पट्टे के निष्पादन पर सम्पत्ति के आधिपत्य या विभाजन तथा पृथक आधिपत्य का परिदान।

(4) इस धारा से सम्बन्धित वाद में किसी भी अनुतोष के लिए, विक्रेता, पट्टाकर्ता, क्रेता या पट्टाग्रहीता, जैसी भी स्थिति हो, कोई भी अलग वाद संस्थित नहीं कर सकेगा।

(5) इस धारा के अंतर्गत की जाने वाली कार्यवाहियों के व्यय के सम्बन्ध में न्यायालय का स्वविवेक होगा।

यह धारा किसी संविदा के विखंडन का उपचार प्रदान करती है। यदि क्रेता या पट्टाकर्ता को आज्ञाप्ति में निर्दिष्ट अवधि में क्रय राशि या अन्य कोई राशि का भुगतान नहीं किया जाता है तो उनके आवेदन पर उस संविदा का विखंडन कर दिया जायेगा। यदि संविदा का विखंडन क्रेता की चूक पर किया जाता है तो क्रेता द्वारा विक्रेता को दी गई अग्रिम राशि जब्त कर ली जायेगी, यदि अन्यथा कोई शर्त संविदा में नहीं की गई हो।

धारा 29 विशिष्ट अनुपालन के वाद में विखंडन के लिए विकल्प के रूप में प्रार्थना

— जब वादी न्यायालय में किसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए वाद संस्थित करता है तो वह उसमें प्रार्थना कर सकेगा कि या तो संविदा का विशिष्ट अनुपालन करवाया जाय या फिर उसे विखंडित किये जाने का आदेश प्रदान कराया जाय और यदि न्यायालय ऐसी संविदा के विशिष्ट अनुपालन से इंकार करता है तो वह उसे विखंडित करने का निर्देश दे सकेगा। इसमें श्रीमती किशना बाई सी कदम बनाम बेलबर्थ डेवलपर्स (AIR 2001) का मामला उद्धरणीय है।

वादी न्यायालय से विशिष्ट अनुपालन के लिए अनुतोष के साथ-साथ उसके विखंडन की भी माँग कर सकेगा और यदि न्यायालय विशिष्ट अनुपालन के अनुतोष को स्वीकार नहीं करता है तो वह उसके विखंडन का निर्देश देगा। कोई भी वादी विशिष्ट अनुपालन के अनुतोष के साथ-साथ विकल्प रूप में विखंडन की माँग कर सकता है, पर विखंडन के अनुतोष के साथ विशिष्ट अनुपालन की माँग नहीं कर सकेगा।

धारा 30 न्यायालय विखंडन चाहने वाले पक्षकार से साम्य-युक्त व्यवहार की अपेक्षा कर सकेगा।

किसी संविदा के विखंडन के न्यायनिर्णीत हो जाने पर, न्यायालय उस पक्षकार से, जिसके आवेदन पर विखंडन किया जाना है, उस पक्षकार को प्रतिकार देने का आदेश दे सकेगा जिससे कि उसने कुछ लाभ अर्जित किया है।

यह धारा साम्य विधि के इस सिद्धांत पर आधारित है कि साम्य चाहने वाले को साम्य बरतना आवश्यक है। इस धारा के प्रावधानों के अंतर्गत न्यायालय संविदा के विखंडन चाहने वाले पक्षकार को इस बात के लिए बाध्य कर सकेगा कि वह उस पक्षकार को प्रतिकार दे जिससे कि प्रतिस्थापित करने के लिए किया गया है। अर्जित लाभ के बदले में प्रतिकार प्राप्त करने वाले पक्षकार को लाभ का मूल्य सिद्ध करना होगा।

अध्याय - 7 विलेखों का विलोपन या रद्दीकरण

(CANCELLATION OF INSTRUMENTS)

विधि का उद्देश्य पक्षकारों को सुरक्षा एवं न्याय प्रदान करना है। वह पक्षकारों के आचरण एवं व्यवहारों को नियमित करके न्याय को सुलभ एवं प्रयोज्य बनाती है। सामान्यतः मनुष्यों के व्यवहार एवं कार्य उनके बीच निष्पादित विलेखों द्वारा नियमित होते हैं और यह विलेख कभी-कभी कपट, मिथ्या व्यपदेशन, अनुचित-प्रभाव, दबाव या भूल के अधीन निष्पादित कर दिया जाते हैं। अतः ऐसे विलेख पक्षकारों के हित या आशय के अनुरूप नहीं होकर उन्हें हानि पहुँचाने वाले होते हैं। विधि सदा ही ऐसे विलेखों को निरस्त करने के पक्ष में रहती है, और इसी को विलेखों का विलोपन कहते हैं, जिसका विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 31 से 33 में उल्लेख किया गया है।

धारा 31 - विलोपन की आवश्यक शर्तें

किसी विलेख के विलोपन के अनुतोष के लिये निम्नलिखित शर्तों का पूरा किया जाना आवश्यक है

- (1) कि ऐसा विलेख शून्य या शून्यकरणीय है।
- (2) कि वादी को उससे भारी क्षति की युक्तियुक्त आशंका है।
- (3) कि न्यायालय मामले की परिस्थितियों के अनुसार अपने विवेक पर उसे विलोपित करना आवश्यक समझता है।

(1) विलेख का शून्य या शून्यकरणीय होना - विलोपन की प्रथम शर्त विलेख का शून्य या शून्यकरणीय होना है। यह कपट, मिथ्या-व्यपदेशन, दबाव, अनुचित प्रभाव या उत्पीड़न आदि कारणों से हो सकता है। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसका उस विलेख में हित अन्तर्निहित हो, उसके विलोपन की माँग कर सकता है। किसी सार्वजनिक न्यास की सम्पत्ति का अप्राधिकृत व्यक्ति द्वारा विक्रय कर दिये जाने पर शिबैत ऐसे विक्रय-विलेख को शून्य घोषित कराने के लिये वाद ला सकता है। लेकिन ऐसा कोई भी सम्पूर्ण विलेख मात्र इस आधार पर शून्य या शून्यकरणीय नहीं हो सकता कि उसमें के प्रतिफल को भुगतान नहीं किया गया है।

(2) भारी क्षति होने के युक्तियुक्त आशंका - विलोपन की दूसरी शर्त विलेख से भारी क्षति होने की युक्तियुक्त आशंका का होना है। मात्र इस आधार पर कि विलेख शून्य या शून्यकरणीय है, विलोपित नहीं किया जा सकता, जब तक कि यह सिद्ध नहीं कर दिया जाये कि यदि ऐसा विलेख अस्तित्व में बना रहा तो वादी को भारी क्षति होने की युक्तियुक्त आशंका है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि शून्य दस्तावेज अथवा बिक्री से प्रभावित होने वाले व्यक्ति अपने पक्ष में सार्वभूत अनुलोप के लिए वाद ला सकते हैं। ऐसे वादों में ऐसे दस्तावेजों के रद्दीकरण (विलोपन) की माँग किया जाना आवश्यक नहीं है।

(3) न्यायालय द्वारा उसे विलोपन के लिए आवश्यक समझा जाना - विलोपन की तीसरी शर्त न्यायालय द्वारा उसे विलोपन-योग्य समझना है। यह न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति है। मात्र वादी के कथन से कोई विलेख विलोपित नहीं किया जा सकता, जब तक कि न्यायालय उसे मामले की परिस्थितियों के अनुसार विलोपन-योग्य नहीं समझे।

स्पष्टीकरण

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 31 के अंतर्गत समझे जाने वाले विलेखों में निर्णय एवं पंचाट को सम्मिलित नहीं किया जा सकता। इनमें सिर्फ ऐसे ही विलेख सम्मिलित समझे जाते हैं जो कि न्यायनिर्णीत नहीं हैं। इसलिए किसी भी पंचाट को शून्य, शून्यकरणीय या विलोपित किये जाने के लिए न्यायालय में वाद संस्थित नहीं किया जा सकता। किसी विकृतचित्त व्यक्ति द्वारा निष्पादित पॉवर ऑफ एटार्नी को शून्य घोषित किया जाना न्यायसंगत माना गया है।

(i) एक पोत का स्वामी, पोत को समुद्र यात्रा के योग्य होने का मिथ्या कथन करके ब एक बीमाकर्ता को उसका बीमा करने के लिये उत्प्रेरित करता है। ब उस बीमा पॉलिसी का विलोपन करवा सकता है।

(ii) अ स के लिये एक भूमि का उत्तरदान करने का आशय के साथ ब को हस्तांतरण कर मर जाता है। द एक अन्य व्यक्ति उस पर आधिपत्य प्राप्त कर लेता है एवं इस आशय का कि वह भूमि द के लिये ब को न्यासी के रूप में हस्तांतरित की गई थी, एक कूटरचित्त विलेख प्रस्तुत करता है। स उस कूटरचित्त विलेख के विलोपन की माँग की सकता है।

इस धारा में ऐसे किसी विलेख के विलोपन का अधिकार निर्मित किया गया है जो कि शून्य या शून्यकरणीय है। यह आशय एवं सुरक्षा के सिद्धांत पर आधारित है।

धारा 32 किन विलेखों का आंशिक विलोपन किया जा सकता है-

जहाँ कि कोई विलेख विभिन्न अधिकारों या दायित्वों का साक्ष्य है, तो न्यायालय समुचित मामले में उसके किसी भाग को विलोपित कर सकेगा एवं अवशिष्ट को बना रहने देगा।

अ द्वारा ब के पक्ष में एक बंधक-विलेख निष्पादित है। अ उसको कपट द्वारा ब से पुनः प्राप्त करता है एवं उस पर ब के हस्ताक्षर चिह्नित करते हुए 1200 रु० की प्राप्ति का पृष्ठांकन कर देता है। ब के हस्ताक्षर जाली किये गये हैं। अतः ब को 1200 रु० की प्राप्ति के पृष्ठांकन को विलोपित कराते हुए शेष को यथावत् बनाये रखने का अधिकार है।

यह धारा ऐसे विलेखों के आंशिक विलोपन का उपबन्ध करती है, जिसमें विभिन्न अधिकार या दायित्व अन्तर्निहित है। फिर भी न्यायालय आंशिक विलोपन करने के लिए बद्ध नहीं है। यह उसी विवेकाधीन शक्ति है कि यदि वह मामले की परिस्थितियों के अनुसार उचित समझे तो आंशिक विलोपन का आदेश दे।

धारा 33-

फायदा प्रत्यावर्तित करने या प्रतिकर दिलावे की अपेक्षा करने की शक्ति जब लिखित रद्द की जाए या उसका शून्य या शून्यकरणीय होने के आधार पर सफलपूर्वक प्रतिरोध किया जाए।

इस सिद्धांत का प्रयोग न्यायालयों ने प्रायः अवयस्कों की, ऐसे करारों से रक्षा करने के लिए किया है, जिनमें वह जाने या अनजाने से पक्षकार बन जाते हैं। एक उदाहरण "मोहरी बीबी बनाम धर्मोदास घोष" में प्रिवी काउंसिल का निर्णय है। इस मामले के तथ्यों के अनुसार न्यायालय ने कहा कि न्याय ऋणदाता की ओर से किसी भी अनुतोष को अपेक्षित नहीं करता था, क्योंकि उसने बहुत बड़ी लापरवाही सत्यता जानते हुए बरता और एक अवयस्क के साथ संव्यवहार किया था। धारा के उपबन्ध इस बात पर स्पष्ट है कि न्यायालय केवल उसी व्यक्ति को प्रतिकर देने के लिए बाध्य कर सकता है जो रद्दकरण के अनुतोष की माँग कर रहा था। खानगुल बनाम लाखा सिंह के वाद में लाहौर उच्च न्यायालय के समक्ष एक व्यक्ति ने अवयस्क के विरुद्ध वसूली का दावा किया था। कहा गया कि यह उपबन्ध केवल उस व्यक्ति के विरुद्ध अनुतोष का उपाय लागू करते हैं जो स्वयं रद्दकरण की माँग करता है, न कि ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जो न्यायालय में प्रतिवादी के रूप में आया है। यहाँ अवयस्क ने भूमि बेचने की जो कीमत प्राप्त कर ली थी, उसे लौटाने को न्यायालय ने कहा, यदि वह भूमि विक्रय विलेख का रद्दकरण चाहता था।

इसके मुकाबले इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 'अयुध्या प्रसाद बनाम चन्दन लाल' में एक ऐसे अवयस्क को पैसा लौटाने के लिए विवश नहीं किया जो न्यायालय में प्रतिवादी के रूप में आया था जिससे बन्धक धन वापस माँगा जा रहा था।

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 में विधि आयोग की सिफारिशों के हिसाब से प्रवर्तित किया जा रहा था। विधि आयोग ने इस संबंध में निम्न सिफारिश पेश की-

1. जब कोई शून्य करार या शून्यकरणीय संविदा किसी भी पक्षकार की प्रार्थना पर रद्द की जाती है तो न्यायालय उससे कह सकता है कि वह वे सब लाभ वापस कर दे जो संविदा के अन्तर्गत उसने प्राप्त किये हैं या दूसरे पक्षकार को कम से कम इतना प्रतिकर दे जो न्यायसंगत हो।

2. जब कोई प्रतिवादी सफलता से यह प्रतिरक्षा कर लेता है कि संविदा उसके अक्षम होने के कारण शून्य है तो उसे यह सब लाभ वापस करने के लिए कहा जा सकता है परन्तु केवल उस सीमा तक जहाँ तक उसे या उसकी सम्पदा को लाभ पहुँचा है।

विलोपन एवं परिशोधन में अंतर

विलेखों के विलोपन एवं परिशोधन में निम्नलिखित अंतर पाया जाता है।

क्रम सं.	परिशोधन	विलोपन
1.	विलेख में परिशोधन उस समय अनुदत्त किया जाता है, जबकि उसमें की संविदा पूर्ण हो, पर वह पक्षकारों के आशय को स्पष्ट नहीं कर पा रही हो	जबकि विलोपन संविदा के शून्य या शून्य-करणीय होने पर किया जाता है।
2.	परिशोधन के अंतर्गत पक्षकार संविदा के विलेख में सुधार करना चाहते हैं।	जबकि विलोपन में संविदा को ही समाप्त कर से की माँग की जाती है।
3.	परिशोधन के आधार अत्यन्त सीमित हैं।	जबकि विलोपन के आधार पर अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत हैं।
4.	परिशोधन की माँग के साथ-साथ संविदा के विशिष्ट अनुपालन की माँग भी की जा सकती है।	पर विलोपन की माँग अनन्य रूप से विलोपन के लिये ही हो सकती है।

विलोपन एवं विखंडन में अंतर

विलेखों के विलोपन एवं संविदा के विखंडन में भी कुछ अंतर व्याप्त है जो निम्नलिखित है -

क्रम सं.	विखंडन	विलोपन
1.	विखंडन से अधिप्राप्त किसी सक्रिय संविदा को समाप्त करते हुए उसे आरम्भ से ही शून्य घोषित करना है।	जबकि विलोपन में किसी संविदा का सक्रिय होना प्रतीत नहीं होता वरन् उसके अमान्य होने का कथन किया जाता है।
2.	विखंडन संविदा के शून्यकरणीय होने पर ही किया जाता है।	जबकि विलोपन शून्य एवं शून्यकरणीय दोनों अवस्थाओं में किया जा सकता है।
3.	विखंडन केवल संविदाओं का ही हो सकता है।	जबकि विलोपन किसी भी विलेख का किया जा सकता है।
4.	विखंडन में यह सिद्ध करना आवश्यक नहीं होता कि यदि उसे बना रहने दिया गया तो भारी क्षति होने की सम्भावना या-आशंका है।	जबकि विलोपन में भारी क्षति होने की आवश्यक है।

अध्याय - 8 घोषणात्मक आज्ञप्तियाँ

अधिकार सभ्य एवं व्यवस्थित समाज के द्योतक हैं। प्रत्येक मनुष्य कुछ अधिकार रखता है एवं अधिकारों का अस्तित्व बनाये रखने के लिए हर सम्भव प्रयास करता है। यदि कोई व्यक्ति उसके किसी अधिकार का अतिलंघन करता है तो या तो वह न्यायालय द्वारा दंडित किया जाता है या फिर उससे क्षतिपूर्ति दिलायी जाती है। क्योंकि जहाँ अधिकार है वहाँ उपचार है कि उक्ति का हमारे यहाँ प्रचलन है एवं साम्य किसी दुष्कृति या अपकार का उपचारविहीन भी नहीं छोड़ता है। लेकिन कभी-कभी ऐसी स्थिति भी आ जाती है कि जब अधिकारों का स्पष्टतः अतिलंघन तो नहीं किया जाता है, लेकिन उनके अस्तित्व से इंकार कर दिया जाता है। यह ऐसा कोई अपकार भी नहीं है कि न्यायालय दोषी व्यक्ति को दंडित कर सके अथवा कोई अन्य उपचार प्रदान कर सके।

सर्वप्रथम इंग्लैंड में सन् 1852 में चांसरी प्रक्रिया अधिनियम की धारा 50 के अंतर्गत ऐसे अधिकारों के अस्तित्व से इंकार किये जाने पर उपचारों का प्रावधान किया गया। इसके ठीक सात वर्ष पश्चात् भारत में भी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1859 की धारा 15 के अंतर्गत इसका प्रावधान किया गया जिसे सन् 1877 के विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 42 में हस्तांतरित कर दिया गया। यह अधिनियम भी निरस्त कर दिया गया एवं अब धारा 42 के प्रावधान वर्तमान विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 34 में प्रतिस्थापित किये गये हैं।

धारा 34 अधिकार या हैसियत की घोषणा के सम्बन्ध में न्यायालय का विवेक

ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो अपनी विधिक हैसियत रखता है या किसी सम्पत्ति में अधिकार रखता है किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध न्यायालय में वाद संस्थित कर सकेगा जो उसके ऐसे अधिकार या हैसियत को इंकार करता है या करने में हित बद्ध है और तब यह न्यायालय के विवेक पर है कि वह यह घोषणा करे कि वह व्यक्ति ऐसे अधिकारों या हैसियत को रखने के लिए अधिकृत है और वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उस वाद में अन्य किसी अनुतोष की माँग करे। लेकिन जहाँ वादी की ऐसी घोषणा के साथ अन्य कोई अनुतोष माँगना हों, और वह नहीं माँगता है तो न्यायालय ऐसी घोषणा से इंकार कर देगा।

दृष्टान्त-

(1) अ एक भूमि पर वैधानिक रूप से आधिपत्य रखता है। उस भूमि के निकट वाले गाँव के निवासी उस भूमि पर अपने भागीधिकार का दावा करते हैं। अ इस घोषणा के लिए वाद संस्थित कर सकता है कि दावाकृत व्यक्तियों को ऐसा कोई अधिकार नहीं है।

(2) अ, ब को कोई ऐसी सम्पत्ति का अनन्यतः संक्रामण करता है, जिसमें कि उसका जीवन पर्यन्त हित है। स उस सम्पत्ति में उत्तराधिकारी के रूप में अधिकार रखता है, अतः ब के सम्बन्ध में अन्य संक्रामण अमान्य है। स अ एवं ब के विरुद्ध न्यायालय में इस आशय की घोषणा के लिए वाद संस्थित कर सकेगा कि स उसके लिए अधिकृत है।

(3) अ किसी सम्पत्ति पर अपना आधिपत्य रखता है। ब यह कथन करते हुए कि वह स्वयं उस सम्पत्ति का स्वामी है, उस भूमि को परिदत्त करने की माँग करता है। अ उस सम्पत्ति को धारण करने के अपने अधिकार की घोषणा की माँग कर सकता है।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम में घोषणात्मक आज्ञप्तियों का अध्याय एक नवीन एवं महत्वपूर्ण अध्याय है। घोषणात्मक आज्ञप्ति एक ऐसी आज्ञप्ति है जिसके अंतर्गत न तो प्रतिकर ही देय होता

है और न ही उसके निष्पादन की आवश्यकता ही होती है। यह एक ऐसी आज्ञाप्ति है जो मात्र अधिकारों या हैसियत की घोषणा करती है, इससे अधिक और कुछ नहीं। इस प्रकार घोषणात्मक आज्ञाप्ति व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करने एवं उन्हें यथास्थान रखने का कार्य करती है। अधिकार, स्वत्व अथवा अस्तित्व की घोषणात्मक डिक्री पारित करने का मुख्य उद्देश्य स्वत्व सम्बन्धी भावी मुकद्दमेबाजी का निवारण करना अथवा रोकना है।

घोषणात्मक आपत्ति की आवश्यक शर्तें - घोषणात्मक आज्ञाप्ति के लिए वाद संस्थित करने हेतु निम्नलिखित आवश्यक शर्तों का निरूपण किया गया है-

(1) वादी-किसी विधिक हैसियत या अधिकार का अधिकारी हो - घोषणात्मक आज्ञाप्ति की प्रथम शर्त वादी की विधिक हैसियत या सम्पत्ति में किसी अधिकार का होना है। ऐसी हैसियत या अधिकार का वर्तमान में अस्तित्व में होना आवश्यक है। भविष्य में अस्तित्व में आने वाले अधिकारों या हैसियत की घोषणा के लिए यह धारा प्रयोक्त्य नहीं होगी। ऐसा कोई व्यक्ति जो अपनी विधिक हैसियत या सम्पत्ति में कोई अधिकार नहीं रखता है घोषणात्मक आज्ञाप्ति के लिए माँग नहीं कर सकता।

उदाहरणार्थ - नगरपालिका के कमिश्नर पद पर प्रत्याशी के रूप में खड़ा होने का अधिकार एक महत्वपूर्ण अधिकार है एवं वह विधिक हैसियत रखता है। लेकिन किसी निर्वाचक सूची में चुनाव पूर्ण हो जाने के बाद संशोधन की घोषणा की माँग नहीं की जा सकती है।

(2) प्रतिवादी उसके अधिकारों या हैसियत से इंकार करता हो - घोषणात्मक आज्ञाप्ति के लिए मात्र विधिक हैसियत रखना या सम्पत्ति में कोई अधिकार रखना ही पर्याप्त नहीं है, जब तक कि अन्य व्यक्ति उसकी विधिक हैसियत या अधिकारों से इंकार नहीं करते हों। किसी व्यक्ति द्वारा विधिक हैसियत या अधिकारों से इंकार किया जाना ही नहीं अपितु इंकार करने में अभिरुचि रखना भी घोषणात्मक आज्ञाप्ति का आधार बन जाता है।

(3) घोषणात्मक वाद विधिक हैसियत या सम्पत्ति में अधिकारों की घोषणा के लिये किया चाहिये - घोषणात्मक आज्ञाप्ति की तीसरी आवश्यक शर्त यह है कि वादी द्वारा संस्थित किया गया वाद उसकी विधिक हैसियत या सम्पत्ति में अधिकारों की घोषणा के लिए हो।

(4) जहाँ आनुषंगिक अनुतोष आवश्यक हो, उसकी माँग की जानी चाहिये - घोषणात्मक आज्ञाप्ति की चौथी एवं अंतिम शर्त जहाँ आवश्यक हो, आनुषंगिक अनुतोष की माँग करना है।

जहाँ वादी ने मात्र इस घोषणा के लिए वाद संस्थित किया हो कि कोई दस्तावेज विशेष उसकी सम्पत्ति को प्रभावित नहीं करता है वहाँ यदि ऐसी सम्पत्ति उसके कब्जे में नहीं है तो घोषणात्मक डिक्री तब तक पारित नहीं की जा सकेगी जब तक वह ऐसी सम्पत्ति के कब्जे की तथा उस दस्तावेज को निरस्त करने के आनुषंगिक अनुतोष की माँग नहीं कर करता।

लेकिन यदि वादी, कथित होते हुए भी ऐसी माँग नहीं करता है तो मात्र इस आधार पर वाद निरस्त नहीं कर दिया जायेगा एवं वादी को ऐसा अनुतोष माँगने के लिये कहा जायेगा। वादी वाद में भी संशोधन द्वारा ऐसे अनुतोष की माँग कर सकता है।

उदाहरणार्थ - हकशुफा के अधिकार की घोषणा के वादों में आज्ञाप्ति तब तक पारित नहीं की जायेगी, जब तक कि उसके साथ आनुषंगिक अनुतोष नहीं माँगा गया हो। इस तरह कपट के आधार पर प्राप्त की गई आज्ञाप्ति की घोषणा के लिए वाद तब तक संधारणीय नहीं होगा जब तक कि ऐसी आज्ञाप्ति को अपास्त करने की माँग न की गई हो।

घोषणात्मक आज्ञाप्ति के लिये वाद कौन संस्थित कर सकता है - निम्नलिखित व्यक्ति घोषणात्मक आज्ञाप्ति के लिए वाद संस्थित कर सकते हैं -

- (1) जो कोई विधिक हैसियत रखता हो या
- (2) जो किसी सम्पत्ति में कोई अधिकार रखता हो।

इस धारा में उपबंधित प्रावधानों के अनुसार कोई भी किरायेदार किराये की सम्पत्ति में अपने हितों जैसे - हवा, रोशनी, पानी आदि के अधिकार की घोषणा के लिए वाद ला सकता है।

किससे विरुद्ध वाद संस्थित किया जा सकता है?

ऐसे किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध वाद संस्थित किया जा सकता है -

- (1) जो किसी की विधिक हैसियत या सम्पत्ति में के अधिकारों से इंकार करता हो, या
- (2) ऐसे इंकार करने में अभिरुचि रखता हो।

न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति - घोषणात्मक आज्ञा पारित करना न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति है। जब न्यायालय यह उचित समझता है कि बादी कोई विधिक हैसियत या सम्पत्ति में कोई अधिकार रखता है तो वह ऐसी आज्ञा पारित कर देगा। लेकिन यदि घोषणात्मक आज्ञा के साथ अन्य कोई आनुषंगिक अनुतोष माँगा जाना वांछनीय हो एवं वह नहीं माँगा गया हो तो न्यायालय घोषणात्मक आज्ञा से इंकार कर सकता है।

जैसे-विक्रय-विलेख के निष्पादन में जहाँ भूमि का कब्जा क्रेता को परिदत्त कर दिया गया हो, वहाँ वादी ऐसी भूमि के सम्बन्ध में घोषणात्मक डिक्ली प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होगा, यदि वह आनुषंगिक अनुतोष के रूप में उसमें भूमि का कब्जा प्राप्त करने का दावा नहीं करता है। लेकिन जहाँ आनुषंगिक अनुतोष की आवश्यकता नहीं हो वहाँ इसकी माँग किया जाना आवश्यक नहीं है। कपट द्वारा अभिप्राप्त डिक्ली को दूषित घोषित करने के लिए वाद में कपट का अभिवचन किया जाना एवं उसे साबित किया जाना आवश्यक है। कपट से अभिप्राय यहाँ दुर्यपदेशन अथवा जानबूझकर तथ्यों को छिपाने से है।

धारा 35 घोषणा का प्रभाव

इस अध्याय के अंतर्गत की गई घोषणा

- (i) वाद के पक्षकारों पर,
- (ii) क्रमशः उनकी ओर से दावा करने वाले व्यक्तियों पर, एवं
- (iii) जहाँ पक्षकारों में कोई पक्षकार न्यासधारी है तो उन व्यक्तियों पर, जिनका अस्तित्व यदि ऐसी घोषणा के दिनांक पर होता तो वे न्यासधारी होते, बाध्यकारी होती है।

एस० एन० पी० शिपिंग सर्विसेज प्रा० लि० बनाम वर्ल्ड टैंकर कैरियर कॉरपोरेशन के मामले में भी बम्बई उच्च न्यायालय द्वारा यही अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 34 के अधीन की जाने वाली घोषणा केवल वाद के पक्षकारों पर आबद्धकर होती है। ऐसी घोषणा व्यक्तिलक्षी है न कि लोकलक्षी। इस धारा के अर्थों के अंतर्गत किसी गोद लिये गये व्यक्ति के बारे में की गई घोषणा लोकलक्षी निर्णय नहीं होगी।

घोषणात्मक डिक्लिया से संबंधित मामले निम्न हो सकते हैं-

- | | |
|--------------------------------------|---|
| 1. पति-पत्नी होने की घोषणा के लिए। | 9. धर्मज पुत्र होने की घोषणा। |
| 2. पति-पत्नी के संबंध न होने के लिए। | 10. विवाह विघटन की घोषणा जब धर्म परिवर्तन कर लिया हो। |
| 3. विकृत चित्त होने की। | 11. विशिष्ट जाति का होने की घोषणा। |
| 4. न्यासी होने की। | 12. संरक्षकता की घोषणा। |
| 5. दत्तक पुत्र होने की। | 13. दिवालिया होने की घोषणा। |
| 6. दत्तक पुत्र न होने की। | 14. भू-स्वामी होने की घोषणा आदि। |
| 7. जन्मतिथि की। | |
| 8. आयु के बारे में घोषणा। | |

अध्याय - 9 निवारक अनुतोष

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, साथ ही साथ एक वैध व्यक्ति भी। वैध व्यक्ति होने के कारण वह कुछ अधिकारों का उपभोग करता है एवं साथ ही कुछ कर्तव्यों का निर्वाह भी। इस तरह वैध व्यक्ति अधिकारों एवं कर्तव्यों का एक पुंज है। उसे अपने कर्तव्यों का ध्यान रखते हुए अधिकारों का उपभोग करना होता है, क्योंकि जो उसके अधिकार हैं, वे ही एक दूसरे के कर्तव्य हैं एवं जो दूसरे के कर्तव्य हैं, वे ही उसके अधिकार हैं। यदि कोई व्यक्ति ऐसा कोई कार्य करता है जो उसे नहीं करना है एवं जिसके करने से अन्य व्यक्ति के अधिकारों या हितों का अतिलंघन होता हो तो विधि उसे ऐसा नहीं करने देगी। विधि न्यायालय के माध्यम से उसके ऐसे कार्यों पर रोक लगा देगी। न्यायालय जिस माध्यम से ऐसी रोक लगाता है, वही विधिक शब्दों में निवारक अनुतोष है।

निषेधात्मक अनुतोष व्यादेश के द्वारा प्रदान किया जाता है। विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 36 से 42 तक में इन व्यादेशों का उपबंध किया जाता है।

धारा 36 निषेधात्मक अनुतोष कैसे प्रदान किया जाता है

निषेधात्मक अनुतोष न्यायालय के विवेकानुसार व्यादेशों के माध्यम से प्रदान किया जाता है जो अस्थायी या शाश्वत हो सकते हैं। कोई व्यादेश जारी करना अथवा नहीं करना यह न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति है।

इस प्रकार निषेधात्मक अनुतोष का यह अव्याय व्यादेश के माध्यम से आभारों के भंग को रोकने का उपचार प्रदान करता है।

व्यादेश की परिभाषा

विधिशास्त्रियों ने व्यादेश की भिन्न-भिन्न परिभाषायें दी हैं -
हाल्सबरी के अनुसार -

“व्यादेश एक ऐसी न्यायिक कार्यवाही है जिसके द्वारा किसी पक्षकार को कोई विशिष्ट कार्य करने या नहीं करने का आदेश दिया जाता है।”

बार्नी के विश्वकोष में उल्लिखित परिभाषा के अनुसार -

“व्यादेश एक ऐसा आदेश है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति के अधिकारों में हस्तक्षेप करने या हस्तक्षेप करने की धमकी देने से रोका जाता है।”

पोलक एवं मुल्ला के अनुसार -

“व्यादेश न्यायालय का एक ऐसा विशिष्ट आदेश है, जिसके द्वारा किसी ऐसे व्यक्ति को, जो किसी व्यक्ति के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों में हस्तक्षेप करता है या करने की धमकी देता है, ऐसा करने से रोका जाता है एवं यदि किसी आभार के भंग को रोकने के लिए कोई कार्य किया जाना या नहीं किया जाना आवश्यक हो जैसी भी स्थिति हो तो न्यायालय वैसा करने का आदेश देता है।”

निषेधात्मक अनुतोष एवं विशिष्ट अनुपालन में अंतर

व्यादेश पर विस्तार से प्रकाश डालने से पूर्व यह समीचीन होगा कि निषेधात्मक अनुतोष एवं विशिष्ट अनुपालन के अंतर को स्पष्ट कर दिया जाये। इन दोनों में सामान्यतः निम्नलिखित अंतर पाया जाता है -

क्रम सं.	विशिष्ट अनुपालन	निषेधात्मक अनुतोष
1.	विशिष्ट अनुपालन के अंतर्गत न्यायालय व्यक्ति को ऐसा कार्य करने के लिए बाध्य करता है जिसको करने का उसके ऊपर दायित्व या आभार है या उसने ऐसा कोई कार्य करने की प्रतिज्ञा की है।	जबकि निषेधात्मक अनुतोष किसी व्यक्ति को ऐसा कोई कार्य करने से रोककर अनुदत्त किया जाता है जिसके करने से अन्य व्यक्तियों के अधिकारों का अतिलंघन होता है।
2.	यह सकारात्मक प्रकृति का होता है।	जबकि यह नकारात्मक प्रकृति का होता है।
3.	विशिष्ट अनुपालन केवल संविदाओं का ही कराया जा सकता है।	जबकि निषेधात्मक अनुतोष किसी भी अपकृत्य को रोकने के लिए अनुदत्त किया जा सकता है।
4.	विशिष्ट अनुपालन की आज्ञा का उद्देश्य किसी विशिष्ट कार्य के अनुपालन को प्रवर्तनीय बनाना है।	जबकि इसके विपरीत निषेधात्मक अनुतोष का अभिप्राय किसी कार्य विशेष को करने से निषेध करना है।

व्यादेश के प्रकार

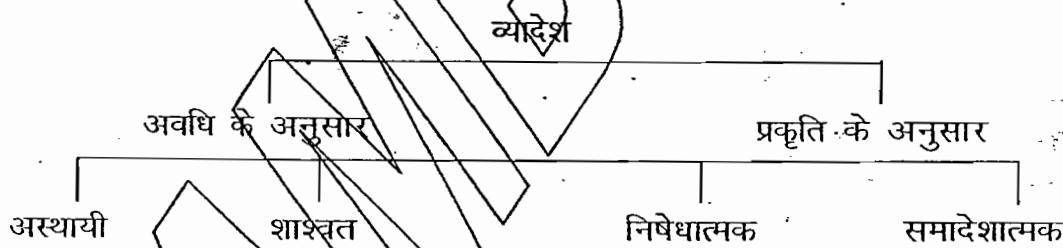
व्यादेश के मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं। यह वर्गीकरण उनकी प्रकृति एवं अवधि के आधार पर किया गया है -

प्रकृति के अनुसार व्यादेश -

- निषेधात्मक, एवं
- समादेशात्मक होते हैं।

अवधि के अनुसार व्यादेश -

- अस्थायी, एवं
- शाश्वत होते हैं।



अस्थायी व्यादेश (धारा - 37 (1) सपठित आदेश-39, सि.प्र.सं.)

अस्थायी व्यादेश को हम प्राद कालीन व्यादेश या अंतःकालीन व्यादेश भी कह सकते हैं। "अस्थायी व्यादेश सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन 39 के द्वारा नियमित होते हैं।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 37(1) के अनुसार -

अस्थायी व्यादेश, वाद के किसी भी प्रक्रम पर जारी किये गये ऐसे आदेश होते हैं जो एक विशिष्ट समय तक या न्यायालय के अग्रिम आदेश तक बने रहते हैं और जो C.P.C. से विनियमित होते हैं।"

सामान्यतः वाद लम्बे समय तक चलने वाले होते हैं, ऐसी अवस्था में वाद के निर्णीत होने तक

प्रतिवादी ऐसे कार्य कर सकता है जो वादी के लिये अत्यन्त क्षतिकारक हो, और यदि ऐसा करने दिया गया तो वादी को न्याय प्राप्त नहीं हो सकता। अतः प्रतिवादी द्वारा ऐसे कार्यों को वाद के निर्णय तक नहीं करने के लिए बाध्य करना आवश्यक होता है। इस आशय का जब वादी न्यायालय में कोई प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करता है और न्यायालय यदि उचित समझता है तो अपने विवेकानुसार प्रतिवादी को वाद के अंतिम निर्णय तक यथास्थिति बनाये रखने का आदेश दे सकता है। यही आदेश अस्थायी व्यादेश कहलाता है।

अस्थायी व्यादेश की आवश्यक शर्तें-

न्यायालय से अस्थायी व्यादेश प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना आवश्यक है-

(1) **प्रथमदृष्ट्या वाद का संस्थापित होना** - अस्थायी व्यादेश प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम वादी को न्यायालय को इस बात से संतुष्ट कर देना होता है कि वादी ने व्यादेश प्राप्त करने के लिए वाद संस्थित कर दिया है। उसे अपना न्यायिक अधिकार सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती। उसे मात्र यही सिद्ध कर देना होता है कि जाँच के लिए सारवान् प्रश्न विद्यमान है एवं जब तक उसका अंतिम निर्णय नहीं हो जाता तब तक मामले को यथास्थिति में रखना आवश्यक है।

(2) **अधिकारों का अतिक्रमण होना** - यदि किसी वैधानिक अधिकार पर विवाद नहीं है तो वादी को यह बताना होगा कि प्रतिवादी कि जिस कार्य की वह शिकायत कर रहा है, वह वादी के अधिकारों का स्पष्टतः अतिक्रमण है या उससे भविष्य में अतिक्रमण होने की सम्भावना है।

ऐसा वाद ऐसे किसी भी व्यक्ति द्वारा लाया जा सकता है जो सम्पत्ति में हित रखता हो। जहाँ गुरुद्वारा के लिए आरक्षित सम्पत्ति पर अतिक्रमण कर अवैध निर्माण कार्य कराया जाता है, वहाँ उसे रोकने के लिए गुरुद्वारा में पूजा-अर्चना करने वाले व्यक्तियों द्वारा वाद लाया जा सकता है। ऐसे व्यक्ति गुरुद्वारा की सम्पत्ति में हितग्राही माने जाते हैं।

(3) **गम्भीर क्षति का होना** - वादी को यह भी सिद्ध करना होगा कि यदि प्रतिवादी को ऐसे कार्य से नहीं रोका गया तो ऐसी अपार या गम्भीर क्षति होने की सम्भावना है जिसकी पूर्ति नहीं की जा सकती है।

यदि कोई व्यक्ति हर्ष एवं प्रकाश के सुखाधिकार में विघ्न पैदा किये जाने को रोकने के लिए व्यादेश की माँग करता है तो उसे यह साबित करना होगा कि ऐसे विघ्न से उसे सारभूत क्षति हो रही है।

(4) **वैकल्पिक उपचार का अभाव** - प्रतिवादी का कार्य ऐसा हो कि जिसको रोकने के लिए या जिससे बचने के लिए व्यादेश के अतिरिक्त अन्य कोई उपचार उपलब्ध नहीं हो। क्योंकि सामान्यतः जहाँ तक अन्य उपचार उपलब्ध हो, व्यादेश जारी नहीं किया जाता।

(5) **सुविधा का संतुलन** - व्यादेश प्राप्त करने के लिए वादी को यह भी सिद्ध करना होगा कि सुविधा का संतुलन वादी के पक्ष में है अर्थात् उसे यह बताना होगा कि यदि व्यादेश वादी के पक्ष में जारी नहीं किया गया तो उसे ऐसी असुविधा होगी जो उपादेश जारी किये जाने पर प्रतिवादी को होने वाली असुविधा से अधिक होगी।

(6) **वादी की अनवधानता का प्रभाव** - यदि वादी व्यादेश की माँग करने में अनुचित विलम्ब करता है या अपने कर्तव्य के प्रति सचेत नहीं लगता है तो न्यायालय व्यादेश जारी करने से इंकार कर देगा।

(7) **साम्य के सिद्धांतों का पालन** - व्यादेश के लिए साम्य के सिद्धांतों का महत्वपूर्ण स्थान

है। वादी को यह संतुष्ट कराना होगा कि उसने साम्य के निम्नांकित दोनों सूत्रों का पालन किया है-

- (i) साम्य चाहने वाले का साम्य बरतना आवश्यक है।
- (ii) साम्य की शरण में आने वाले को स्वच्छ हाथों आना आवश्यक है।
- (8) न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति - अस्थायी व्यादेश अनुदत्त करना या नहीं करना पूर्णतया न्यायालय के विवेक का प्रश्न है।
- (9) शपथपत्र दिया जाना - वादी को अस्थायी व्यादेश प्राप्त करने के लिए उक्त सभी बातें शपथपत्र द्वारा सत्यापित करनी होती है।

शाश्वत व्यादेश (धारा - 37 (2))

अस्थायी व्यादेश से भिन्न शाश्वत व्यादेश वाद के अंतिम निर्णय पर आज्ञप्ति द्वारा जारी किये जाते हैं। प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जिसके अधिकारों का अतिक्रमण होता है, न्यायालय में वाद संस्थित कर शाश्वत व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

अधिनियम की धारा 38 के अनुसार -

- (1) शाश्वत व्यादेश वादी के पक्ष में वर्तमान आभारों के भंग को रोकने के लिये जारी किया जा सकता है, चाहे ऐसे आभार अभिव्यक्त हों या विवक्षित।
- (2) जब किसी आभार का उद्भव संविदा से होता हो तो न्यायालय संविदा के विशिष्ट अनुपालन के अध्याय में निर्दिष्ट नियमों द्वारा दिग्दर्शित होगा।
- (3) जब प्रतिवादी वादी की सम्पत्ति में के अधिकारों में हस्तक्षेप करता हो, या हस्तक्षेप करने की धमकी देता हो; तो न्यायालय निम्नलिखित अवस्थाओं में शाश्वत व्यादेश जारी कर सकेगा।
 - (i) जहाँ प्रतिवादी वादी की सम्पत्ति का न्यासधारी हो।
 - (ii) जहाँ हस्तक्षेप से पहुँची हानि या पहुँचने वाली हानि के लिए वास्तविक क्षतिपूर्ति का निर्धारण करना असम्भव हो या
 - (iii) जहाँ हस्तक्षेप ऐसा हो कि उसके लिये दिया जाने वाला प्रतिकर पर्याप्त अनुतोष नहीं होगा या
 - (iv) जहाँ न्यायिक कार्यवाहियों की बहुलता को रोकने के लिए व्यादेश आवश्यक हो।

दृष्टान्त

(1) अ, ब को कुछ भूमि पट्टे पर देता है एवं ब, अ के साथ संविदा करता है कि वह उसमें से बालू, रेत या कंकड़ नहीं निकालेगा। ब यदि बालू, रेत या कंकड़ निकालता है तो अ संविदा भंग के आधार पर ब को बालू, रेत या कंकड़ निकालने से रोकने के लिए वाद संस्थित कर सकेगा।

(2) अ एक न्यासधारी न्यास-भंग की धमकी देता है। अन्य सह-न्यासधारी या हितग्राही उसे न्यास-भंग से रोकने के लिए वाद संस्थित कर सकेंगे।

(3) किसी लोक कंपनी के निर्देशक कंपनी की पूँजी या उधार लिये गये धन में से लाभांश देने वाले हैं। अशुधारी उन्हें ऐसा करने से रोकने के लिए वाद संस्थित कर सकते हैं।

(4) अ, ब के लिए वकील के रूप में कार्य कर रहा है। अ के कार्य के दौरान ब के कुछ दस्तावेज उसके आधिपत्य में आ जाते हैं। अ उन दस्तावेजों के प्रकाशन या प्रचार की धमकी देता है। ब उसको ऐसा करने से रोकने के लिए वाद संस्थित कर सकता है।

(5) अ, ब का चिकित्सकीय परामर्शदाता है। अ, ब से कुछ धन की माँग करता है, पर ब धन देने से इंकार कर देता है। इस पर अ संसूचनाओं को प्रकट करने की धमकी देता है जो एक रोगी के रूप में ब से प्राप्त हुई है। ब एक वाद द्वारा अ को ऐसा करने से रोकने के लिए व्यादेश की माँग कर सकता है।

(6) अ, ब एवं स ऐसी साझेदारी फर्म के साझेदार हैं जो उनकी इच्छा पर कभी भी समाप्त की जा सकती है। ब साझेदारी फर्म की सम्पत्ति को नष्ट करने की धमकी देता है। ब एवं स साझेदारी फर्म को समाप्त किये बिना अ के विरुद्ध उसके ऐसा नहीं करने के लिए व्यादेश चाहने हेतु वाद संस्थित कर सकते हैं।

(7) अ घंटियाँ बजाकर या अन्य अनुविशेष शोरगुल कर उसके पड़ोसी ब की भौतिक सुख-सुविधा में बाधा पहुँचाता है। ब, अ के विरुद्ध ऐसा शोरगुल नहीं करने के लिए वाद संस्थित कर व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

(8) अ धुएँ द्वारा वायुमंडल को इतना प्रदूषित कर देता है कि पड़ोस में व्यापार कर रहे ब एवं स पर भौतिक रूप से बुरा प्रभाव पड़ता है। ब एवं स, अ के विरुद्ध वाद संस्थित कर वायुमंडल को प्रदूषित करने से रोकने के लिए वाद संस्थित कर सकता है।

(9) अ, ब के व्यापार चिन्ह का अनुचित एवं अवैधानिक तरीके से अतिलंघन करता है एवं न्यायालय यह पाता है कि ब का व्यापार चिन्ह वैध है तथा अ ने उसका अतिलंघन किया है तो उसके अतिलंघन के विरुद्ध व्यादेश जारी किया जा सकता है।

(10) अ एक व्यापारी ख को उसकी इच्छा के विपरीत अपने आपको साझेदार निरूपित करता है ब उसको ऐसा करने से रोकने के लिए व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

शाश्वत व्यादेश की आवश्यक शर्तें

अधिनियम की धारा 38 के अंतर्गत शाश्वत व्यादेश प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित आवश्यक शर्तों की पूर्ति अपेक्षित है -

- (1) वादी कुछ वैध आधार रखता हो।
- (2) प्रतिवादी द्वारा उन आधारों को भंग किया गया हो।
- (3) वादी किसी सम्पत्ति में हित या अधिकार धारण करता हो।
- (4) प्रतिवादी उनमें हस्तक्षेप करता हो या हस्तक्षेप करने की धमकी देता हो।
- (5) ऐसे हस्तक्षेप से पहुँची हानि या पहुँचानी वाली हानि के लिए पर्याप्त प्रतिकर का निर्धारण किया जाना असम्भव हो।
- (6) यदि ऐसा प्रतिकर दिया भी गया तो वह अपर्याप्त अनुतोष हो।
- (7) जहाँ शाश्वत व्यादेश जारी नहीं करने से वाद-बाहुल्य की सम्भावना हो।
- (8) यदि आधार संविदा से उत्पन्न होते हैं तो न्यायालय संविदा के विशिष्ट अनुपालन के अध्याय में निर्दिष्ट नियमों का अनुसरण करेगा।

फिर किसी सम्पत्ति के सम्बन्ध में स्थायी व्यादेश तभी जारी किया जा सकता है, जब वादी यह साबित कर देता है कि विवादग्रस्त सम्पत्ति उसके वास्तविक कब्जे में है।

कब शाश्वत व्यादेश जारी नहीं किया जायेगा -

संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब की सम्पत्ति के प्रबंधन अथवा व्यवस्थापन के बारे में सामान्यतः व्यादेश जारी नहीं किया जाता है। कर्ता को कुटुम्ब की आवश्यकता के लिए सम्पत्ति का अन्य संक्रामण करने का अधिकार है। कोई भी समांशी कर्ता को इस अधिकार से वंचित करने हेतु शाश्वत व्यादेश की माँग नहीं कर सकता। न्यायालय भी सामान्यतः ऐसे मामलों में हस्तक्षेप नहीं करते हैं।

इसी प्रकार जब तक संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब की सम्पत्ति का विभाजन नहीं हो जाता अथवा व्यवस्थापन नहीं हो जाता, तब तक किसी भी समांशी के पक्ष में शाश्वत व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता। लेकिन एक समांशी द्वारा दूसरे समांशी के विरुद्ध संयुक्त कुटुम्ब की अविभक्त सम्पत्ति पर निर्माण कार्य को रूकवाने के लिए व्यादेश हेतु वाद लाया जा सकता है। ऐसे मामलों में स्वत्व की घोषणा का अनुतोष माँगा जाना आवश्यक नहीं है।

सरस्वती अम्माँ बनमा विवेक प्राइमरी स्कूल के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किरायेदार द्वारा भू-स्वामी के विरुद्ध इस आशय का शाश्वत व्यादेश प्राप्त नहीं किया जा सकता है कि वह (भू-स्वामी) किरायेदारी परिसर को कभी खाली नहीं करा सकेगा। ऐसे व्यादेश से भू-स्वामी के अपनी सम्पत्ति के उपभोग के अधिकार समाप्त हो जाते हैं। फिर सम्पत्ति के वास्तविक स्वामी के विरुद्ध एवं अतिक्रमी के पक्ष में भी व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता है।

अंतरिम व्यादेश - संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के वाद में शाश्वत व्यादेश की प्रार्थना नहीं होने पर अंतरिम व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता।

अस्थायी एवं शाश्वत व्यादेश में अंतर

अस्थायी एवं शाश्वत व्यादेश में मुख्यतया निम्नलिखित अंतर पाया जाता है।

क्र. सं.	अस्थायी व्यादेश	शाश्वत व्यादेश
1.	अस्थायी व्यादेश बाध संस्थित करने के बाद उसके किसी भी प्रक्रम पर जारी किया जा सकता है।	जबकि शाश्वत व्यादेश तभी जारी किया जाता है कि वादी ने अपने वाद में अधिकार सिद्ध कर दिया है।
2.	अस्थायी व्यादेश आदेश के द्वारा पारित किया जाते हैं।	जबकि शाश्वत व्यादेश आज्ञापत्र द्वारा पारित होते हैं।
3.	अस्थायी व्यादेश का प्रभाव सिर्फ वाद के अंतिम निर्णय तक रहता है।	जबकि शाश्वत व्यादेश वाद का अंतिम निर्णय हो जाने पर पारित किया जाता है।
4.	अस्थायी व्यादेश का उद्देश्य वाद में की सम्पत्ति को उसके अंतिम निर्णय तक यथा-सम्पत्ति को उसके अंतिम निर्णय तक स्थिति में बनाये रखना है।	जबकि शाश्वत व्यादेश का उद्देश्य वादी के अधिकारों को हमेशा के लिए सुरक्षित रखना एवं प्रभाव में लाना है।
5.	अस्थायी व्यादेश सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 द्वारा नियमित होते हैं।	जबकि शाश्वत व्यादेश विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम द्वारा नियमित होते हैं।

निषेधात्मक व्यादेश - निषेधात्मक व्यादेश एक ऐसा व्यादेश है जो प्रतिवादी को ऐसे कोई कार्य करने से रोकता है जिससे वादी के किन्हीं वैध या साम्यिक अधिकारों को अतिलंघन होता हो।

(1) अ एक ऐसी दीवार का निर्माण करता है जिससे पास के ब के मकान में हवा एवं प्रकाश अवरोध हो जाता है। ब, अ को ऐसी दीवार बनाने से रोकने के लिए निषेधात्मक व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

(2) अ, ब का चिकित्सकीय परामर्शदाता है एवं वह ब से कुछ धन की माँग करता है जिसे देने क लिए ब इंकार कर जाता है। इस पर अ उन संसूचनाओं को प्रकट करने के धमकी देता है जो कि उसे ब से रोगी के रूप में प्राप्त हुई है। ब, अ को ऐसा करने से रोकने के लिए निषेधात्मक व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित महत्वपूर्ण मामले हैं -

(i) मे० पिडिलिटे इण्डस्ट्रीज प्रा० लि० बनाम मे० सीलिंग कॉरपोरेशन का मामला इसमें वादी सन् 1960 से 'फेविकोल' शब्द का व्यापार-चिन्ह के रूप में उपयोग कर रहा था। प्रतिवादी ने सन् 1985 से इससे मिलते-जिलते शब्द 'ट्रेविकोल' का उपयोग करना प्रारम्भ कर दिया। प्रतिवादी ने डिब्बे भी ऐसे बनाये जो भ्रमित करने वाले थे। वादी ने प्रतिवादी को उक्त व्यापार चिन्ह के उपयोग से रोकने हेतु व्यादेश की प्रार्थना की। न्यायालय ने इसे व्यादेश के लिए उपयुक्त मामला माना।

(ii) वेस्टन इलेक्ट्रॉनिक्स बनाम इण्डस्ट्रीज का मामला इस मामले में प्रतिवादी वादी के रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क 'वेस्टन' का उपयोग कर रहा था। उसके पास इस ट्रेड मार्क का उपयोग करने का न तो कोई अधिकार था और न कोई बचाव। न्यायालय ने इस ट्रेड मार्क के उपयोग को रोकने हेतु एकपक्षीय व्यादेश जारी किये जाने की न्यायोचित माना।

(iii) दर्शन राम बनाम नजर राम का मामला इसमें प्रतिवादी ने एक ऐसी भट्टी बनाई जिससे पड़ोसी वादी एवं उसके परिवार को क्षति झारित होती थी। न्यायालय ने उसे अपदूषण मानते हुए भट्टी को हटाने का व्यादेश जारी कर दिया।

(iv) ईश्वर भट्ट बनाम अन्नाप्पा नायकर का मामला इस मामले में केरल उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनियमित किया गया है कि सम्पत्ति का कब्जाधारी एवं उसका उपभोग करने वाला व्यक्ति अतिक्रमी के विरुद्ध निषेधात्मक व्यादेश का वाद ला सकता है।

(4) समादेशात्मक व्यादेश (धारा - 39) - समादेशात्मक व्यादेश एक महत्वपूर्ण व्यादेश माना जाता है एवं काफी विचार के बाद परित किया जाता है। यह एक ऐसा व्यादेश है जो यह अपेक्षा करता है कि जो कुछ अपकार किया जा चुका है, उसे समाप्त कर यथास्थित में लाया जाये एवं आगे के लिए उसे ऐसा करने से रोका जाये। इस तरह समादेशात्मक व्यादेश किसी कार्य-विशेष को करने की आज्ञा देता है, साथ ही साथ आगे के लिए अपकार नहीं करने का आदेश भी देता है। जहाँ प्रतिवादी ने ऐसे छज्जे का निर्माण किया हो जो वादी की भूमि पर आता हो, वहाँ यह व्यादेश जारी किया जा सकेगा कि वह अपने छज्जे को हटाये।

दृष्टांत

(1) अ एक ऐसे मकान का निर्माण करता है जो ब के हवा एवं प्रकाश को रोकता है, जिसे उसने भारतीय अधि अधिनियम के अंतर्गत अर्जित किया है। ब, अ को न केवल आगे के लिए भवन निर्माण में रोक सकता वरन् उसके हवा एवं प्रकाश को अवरोधित किये जाने वाले भाग को हटाने क लिए व्यादेश की माँग कर सकता है।

(2) -अ एक ऐसे मकान का निर्माण करता है जिसका कि कुछ भाग ब की भूमि पर आता है। ब उस भाग को हटाने के लिए व्यादेश प्राप्त कर सकता है।

फिर जहाँ किसी निर्माण कार्य को हटाने के लिए समादेशात्मक व्यादेश जारी किया जाना हो वहाँ ऐसा व्यादेश जारी करने के पूर्व ऐसे निर्माण कार्य पर हुए व्यय को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। समादेशात्मक व्यादेश पर सी० कून्हामद बनाम सी० एच० अहमद हाजी का एक महत्वपूर्ण मामला है। इसमें एक व्यक्ति ने पड़ोसी की भूमि में से पाईप लाईन निकाली। इससे पड़ोसी को क्षति एवं असुविधा कारित होती थी। न्यायालय द्वारा पाईप लाईन को हटाने का आदेश दिया गया क्योंकि ऐसे मामलों में धन से क्षतिपूर्ति नहीं की जा सकती है।

समादेशात्मक व्यादेश के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक बातें निम्नलिखित हैं -

(1) समादेशात्मक व्यादेश जारी करना या नहीं करना पूर्णरूप से न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति के अंतर्गत है।

(2) समादेशात्मक व्यादेश अनुदत्त किये जाने के लिये यह सिद्ध किया जाना आवश्यक है कि प्रतिवादी पर वादी के प्रति कुछ विधिक दायित्व है।

(3) प्रतिवादी द्वारा वैध आभारों का भंग या अतिलंघन किया जाना भी आवश्यक है।

(4) समादेशात्मक व्यादेश अनुदत्त किये जाने के लिये इस बात पर भी विचार किया जाता है कि अतिलंघन को रोकने के लिए कौन-कौन से कार्यों को कराया जाना आवश्यक है।

(5) यह भी यह आवश्यक तत्व है कि क्या न्यायालय ऐसे कार्यों का प्रवर्तन करने के लिये सक्षम है या नहीं।

(6) जहाँ आर्थिक प्रतिकर पर्याप्त हो वहाँ समादेशात्मक व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जायेगा।

(7) यदि वादी द्वारा व्यादेश की माँग करने में अनुचित विलम्ब किया गया हो तो समादेशात्मक व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जायेगा।

(8) समादेशात्मक व्यादेश अपकारयुक्त कार्य पूर्ण हो जाने के बाद भी उसे समाप्त करने के लिये अनुदत्त किया जा सकता है। लेकिन उसके लिये अनुचित विलम्ब नहीं होना चाहिये।

निषेधात्मक व्यादेश एवं समादेशात्मक व्यादेश में अंतर - निषेधात्मक व्यादेश एवं समादेशात्मक व्यादेश में निम्नलिखित अंतर पाया जाता है -

(1) निषेधात्मक व्यादेश किसी कार्य को करने से रोकने के लिये अनुदत्त किया जाता है, जबकि समादेशात्मक व्यादेश कोई कार्य विशेष करने का आदेश होता है।

(2) समादेशात्मक व्यादेश उस अवस्था में जारी किया जाता है, जबकि अस्थायी व्यादेश से कोई अर्थ नहीं निकालता हो।

धारा 40 व्यादेश के बदले में या के अतिरिक्त क्षतिपूर्ति -

(1) धारा 38 के अंतर्गत शाश्वत व्यादेश या धारा 39 के अंतर्गत समादेशात्मक व्यादेश के लिये संस्थित किये जाने बाद में वादी व्यादेश के बदले में या व्यादेश के साथ क्षतिपूर्ति की माँग कर सकता है, एवं यदि न्यायालय उचित समझे तो ऐसी क्षतिपूर्ति का आदेश दे सकता है।

(2) यदि वादी ने वाद में क्षतिपूर्ति की माँग नहीं की है, तो क्षतिपूर्ति अनुदत्त किये जाने का आदेश नहीं दिया जायेगा।

लेकिन जहाँ वाद में ऐसी क्षतिपूर्ति की माँग नहीं की गई है और बाद में वादी ऐसा चाहता है तो न्यायालय बाद के किसी भी प्रक्रम पर वाद में संशोधन करने एवं क्षतिपूर्ति की माँग को सम्मिलित करने की अनुमति दे सकेगा।

(3) यदि वादी के पक्ष में किसी आभार के भंग के वाद को निरस्त कर दिया गया है तो

वादी वाद में क्षतिपूर्ति का वाद संस्थित करने से रोक दिया जायेगा।

धारा 40 विशिष्ट अनुतोष अधिनियम में विशेष रूप से निर्मित की गई है जो पूर्व के निरस्त अधिनियम में नहीं थी। यह धारा व्यादेश के साथ-साथ वादी को क्षतिपूर्ति के रूप में अतिरिक्त अनुतोष अनुदत्त करने का प्रावधान करती है। लेकिन जहाँ आर्थिक क्षतिपूर्ति पर्याप्त अनुतोष हो, वहाँ व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जायेगा। स्वयं वादी भी शाश्वत व्यादेश के वाद में व्यादेश के साथ वैकल्पिक अनुतोष के रूप में क्षतिपूर्ति की मांग कर सकता है। प्राइवेट सूसेन्स के मामलों में जहाँ वादी को क्षति कमरित हुई हो, वहाँ वह स्वतः वाद योग्य है। ऐसे मामलों में क्षतिपूर्ति की उपधारणा की जाती है, अतः क्षतिपूर्ति का आदेश प्रदान किया जा सकता है।

आवश्यक शर्तें -

व्यादेश के स्थान पर क्षतिपूर्ति अनुदत्त की जाने के लिए निम्नलिखित शर्तों का पूरा होना अपेक्षित माना गया है -

- (1) कि वादी के अधिकारों को पहुँचाई गई क्षति बहुत कम है।
- (2) कि ऐसी क्षति का आर्थिक मूल्यांकन किया जा सकता है।
- (3) कि ऐसा आर्थिक प्रतिकर एक बहुत ही छोटी राशि होगी।
- (4) कि मामला ऐसा हो जिसमें व्यादेश का अनुदत्त किया जाना प्रतिवादी के लिए अत्याचारपूर्ण होगा।

धारा 41 व्यादेश से कब इंकार किया जा सकेगा।

व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता -

(1) ऐसे किसी वाद के संस्थित किये जाने के समय, जिसमें व्यादेश चाहा गया है, लम्बित किसी न्यायिक कार्यवाही को रोकने के लिए, जब तक कि ऐसे रोकना कार्यवाहियों की बहुलता को रोकने के लिए आवश्यक नहीं हो।

(2) ऐसे न्यायालय में की कार्यवाहियों को संस्थित करने या अभियोजित करने से रोकने के लिए व्यादेश चाहा गया हो, जो न्यायालय उसके अधीनस्थ नहीं है।

(3) किसी व्यक्ति की विधायी निकाय में आवेदन करने से रोकने के लिए।

(4) किसी व्यक्ति को कोई आपराधिक कार्यवाही संस्थित करने या अभियोजित करने से रोकने के लिए।

(5) ऐसी किसी सचिदा के भंग को रोकने के लिए जिसका कि विशिष्ट अनुपालन नहीं कराया जा सकता।

(6) किसी ऐसी बाधा के भंग को रोकने के लिये, जिसके बारे में उचित रूप से यह स्पष्ट नहीं है कि कोई कार्य बाधा हो जायेगा।

(7) ऐसे किसी निरंतर भंग को रोकने के लिए जिसके बारे में वादी की मौन अनुमति रही हो।

(8) न्यास भंग को छोड़कर, जब किसी अन्य कार्यवाही द्वारा समतुल्य अनुतोष प्राप्त किया जा सकता हो।

(9) जब आवेदनकर्ता या उसके अभिकर्ता का आचरण ऐसा रहा हो कि वह न्यायालय से सहायता प्राप्त नहीं कर सकता हो।

(10) जबकि आवदेनकर्ता का इस विषय में कोई व्यक्तिगत हित निहित नहीं हो।

दृष्टान्त

अ एक साझेदार अपने सह-साझेदार ब को साझेदारी फर्म के ऋणों को प्राप्त करने से रोकने के लिए व्यादेश चाहता है। अप्रत्यक्ष रूप से इसका आशय यह हुआ कि अ, ब से अनुचित तरीके से फर्म की पुस्तकों का आधिपत्य प्राप्त कर रहा है एवं ब को उन बहियों एवं पुस्तकों से वंचित कर रहा हो। अतः न्यायालय व्यादेश अनुदत्त करने से इंकार कर सकेगा।

इस धारा में उन आधारों का उल्लेख किया गया है, जिसके लिए व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता। सामान्यतः ये आधार ऐसे हैं जो या तो साम्य के सिद्धांतों के विपरीत हैं, या इनके लिए व्यादेश के अतिरिक्त अन्य अनुतोष उपलब्ध है या जो विधि के उपबंधों का उल्लंघन करने वाले हैं।

निम्नलिखित अवस्थाओं में कोई व्यादेश जारी नहीं किया जा सकता -

- (1) जहाँ व्यादेश के विकल्प में उसके समान ही अन्य कोई अनुतोष उपलब्ध हो,
- (2) किसी दांडिक मामले में कार्यवाही करने हेतु अभियोजन चलाने से प्रतिवारित करने वाला व्यादेश;
- (3) किसी न्यायिक कार्यवाही को रोकने के लिए व्यादेश।

फिर जहाँ सुविधा का संतुलन प्रतिवादी के पक्ष में हो, वहाँ भी वादी के पक्ष में कोई व्यादेश जारी नहीं किया जा सकता।

श्रीमती रत्ना पॉल बनाम सुभाष रजने पॉल के मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी तीसरी मंजिल के निर्माण को रोकने के लिए व्यादेश जारी नहीं किया जा सकता, यदि -

- (i) ऐसे निर्माण से वादी को कोई क्षति या असुविधा कारित नहीं हो।
- (ii) वादी का प्रथमदृष्टया मामला नहीं हो, तथा
- (iii) प्रतिवादी ने भारी राशि निर्माण कार्य पर व्यय कर दी हो।

कोई भी न्यायालय ऐसे किसी न्यायालय को जो कि उसके अधीनस्थ नहीं है किसी परिसर के निष्कासन की डिक्री पारित करने अथवा निष्पादन को रोकने वाला व्यादेश जारी नहीं कर सकता है।

धारा 42 नकारात्मक करारों का अनुपालन कराने के लिए व्यादेश -

धारा 41 के खंड (5) में किसी बात के होते हुए भी जहाँ कि संविदा में किसी विशिष्ट कार्य के करने का स्वीकारात्मक करार, किसी कार्य के नहीं करने के अभिव्यक्त या उपलक्षित नकारात्मक करार के साथ सम्बद्ध है, वहाँ यह स्थिति कि न्यायालय स्वीकारात्मक करार का विशिष्ट अनुपालन कराने में असमर्थ है, उसे नकारात्मक करार का पालन कराने के लिए व्यादेश जारी करने से नहीं रोकेगी। -

परन्तु प्रतिबंध यह है कि जब आवदेनकर्ता संविदा का पालन उस सीमा तक करने में असफल नहीं हुआ हो, जहाँ तक कि संविदा करने के लिए बाध्य करार है।

यह धारा ऐसी संविदाओं के अनुपालन के बारे में उल्लेख करती है जिसमें किसी कार्य को करने का सकारात्मक करार एवं किसी कार्य को नहीं करने का नकारात्मक करार दोनों ही अन्तर्निहित हों। ऐसी स्थिति में यदि न्यायालय सकारात्मक करार का पालन नहीं करा सकता हो

तो वह उसके नकारात्मक पालन के लिए व्यादेश अनुदत्त कर सकेगा।

लम्ली विरुद्ध वैग्नर का वाद -

कुमारी वैग्नर ने एक अवधि विशेष के लिए लम्ली की रंगशाला में गाने का करार किया एवं इस अवधि में अन्यत्र कहीं पर भी नहीं गाने का करार भी किया। लेकिन कुछ ही समय बाद वैग्नर ने गाना बंद कर दिया एवं संविदा के अनुपालन से इंकार कर दिया। ऐसी स्थिति में न्यायालय व्यादेश अनुदत्त कर वैग्नर को गाने के लिए बाध्य नहीं कर सकता, चूँकि गाना उसकी एक व्यक्तिगत योग्यता है। पर न्यायालय इस आशय का व्यादेश अनुदत्त कर सकता है। कि उक्त अवधि में वह अन्यत्र कहीं नहीं गायेगी।

सुनीलचन्द बनाम आर्योदय स्पनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लि० का वाद - नकारात्मक करार के अनुपालन के लिए व्यादेश अनुदत्त करने के सम्बन्ध में यह एक और महत्वपूर्ण वाद है।

एक टैक्सटाइल टेक्नारियन ने कम्पनी में 5 वर्ष तक सेवा करने का करार किया लेकिन वह अपने साथ बुरे व्यवहार के कारण कम्पनी की सेवा छोड़कर चला गया। कम्पनी ने उसका त्यागपत्र स्वीकार नहीं किया और मामले की जाँच करने का आश्वासन दिया। इस प्रकार वह अन्यत्र सेवा में लग गया। कम्पनी ने उसे अन्यत्र सेवा करने से रोकने के लिए व्यादेश प्राप्त किया।

बर्न एंड कं० विरुद्ध मैकडॉनल्ड का वाद - विपक्षी मैकडॉनल्ड ने अपीलकर्ता कम्पनी में 5 वर्ष पूरे होने के पूर्व ही एक अन्य फर्म राजा श्रीनाथ राय एंड ब्रदर्स में सेवा स्वीकार ली। अपीलकर्ता कम्पनी ने विरुद्ध मैकडॉनल्ड के विरुद्ध इस आशय का व्यादेश प्राप्त कर लिया कि 5 वर्ष पूर्ण होने तक वह कम्पनी के अलावा अन्यत्र कहीं सेवा नहीं करेगा।

AMBI

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम

- Q. क्या ~~अनुतोष~~ साम्या की देन है?
- Q. घोषणात्मक डिक्ली से क्या समझते है?
- Q. इनकी व्यावहारिक उपयोगिता क्या है?
- Q. व्यादेश क्या है? शाश्वत व्यादेश कब जारी किया जा सकता है? अस्थायी व्यादेश और शाश्वत व्यादेश में अन्तर।
- Q. किन परिस्थितियों में अस्थायी जारी किया जा सकता है?
- Q. शाश्वत व्यादेश एवं आज्ञापक व्यादेश में अन्तर।
- Q. किन दशाओं में व्यादेश जारी करने से इंकार किया जा सकता है?

अन्य महत्वपूर्ण बिंदु

- * सम्पत्ति के कब्जे का प्रत्युद्धरण
- * संविदाओं का विनिर्दिष्ट पालन-
- * किन-किन दशाओं में किया जा सकता है?
- * कब नहीं करवाया जा सकता है?
- * कौन व्यक्ति करवा सकता है?
- * कौन नहीं करवा सकता है?

व्यादेश के प्रकार-

समय की दृष्टि से - (1) स्थाई (2) अस्थायी

प्रकृति की दृष्टि से - (1) नकारात्मक (2) सकारात्मक

व्यादेश की परिभाषा-हॉल्सबरी, बोरनी (शब्दकोष)

अस्थायी व्यादेश- धारा 37 (1) + आदेश 39 CPC

विशेष-विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम जहाँ कहीं प्रारम्भिक परीक्षा में रखा गया है जैसे 2008 से छत्तीसगढ़ सिविलजज परीक्षा में तो अब इस अधिनियम का सम्पूर्ण अध्ययन अपेक्षित है अर्थात्

1. धारा-1 से 4 तक (परम्परागत प्रश्न अधिनियम का नाम, विस्तार, प्रवर्तन, उद्देश्य आदि से।
2. धारा-5 से 8 तक में सम्पत्ति के कब्जे के प्रत्युद्धरण के लिए अवधि सीमा (परिसीमा काल) एवं धारा-5 से 6 में तथा धारा-7 व 8 में जिन बिन्दुओं को लेकर अन्तर है आदि।
3. धारा-9-25 में विनिर्दिष्ट अनुपालन का वाद में लगभग धाराओं से अन्तर्संबंधित प्रश्न पूछे जा सकते हैं।
4. धारा-26 में लिखतों के परिशिष्टन के आधारों से।
5. धारा-27 से 30 में संविदाओं के विखण्डन के आधारों से।
6. धारा-31-33, लिखतों का रद्दकरण में आधारों से।
7. धारा-34 व 35 घोषणात्मक आज्ञापति का वाद कौन ला सकता है। किसके विरुद्ध तथा किन आधारों पर न्यायालय की शक्ति आदि।
8. व्यादेश में धारा-36 से 42 में न्यायालय की शक्ति, व्यादेश के जारी किये जाने की शर्तें। साथ ही साथ महत्वपूर्ण न्यायिक विनिश्चय व दृष्टान्तों को समस्या संबंधी प्रश्नों के रूप में पूछा जा सकता है।